

क्षण भर की दुल्हन,

यादवेन्द्र शर्मा 'चंद्र'



नवरत्न प्रकाशन
वीकानेर

© याचवद्र गम

सस्वरण भवदूवर १९६७

मूय रुपये ३ ५० पसे

भावरण नात्रिचद्र

प्रकाशक नवरत्न प्रकाशन
बीकानेर

पुस्तक सहकारा बम्पात्रिग एजेन्सी द्वारा
शुमार ग्राम प्रिन्टिंग प्रेस
नवीन शाहरा दिल्ली ।

प्रकाशकीय

नवरत्न प्रकाशन के आधार-स्तम्भ हैं श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' के आत्मीय, मित्र और सहयोगी । राजस्थानी और अथ प्रान्तीय बंधु ।

यह निर्विवाद है कि श्री चन्द्र जी ने अपनी निरन्तर साहित्य साधना से अग्निल भारतीय ख्याति अर्जित करके न केवल राजस्थान का मान बढ़ाया है, अपितु उनकी प्राचीन भाषामा मे अनूदित कृतियों ने राष्ट्रभाषा का मस्तक गौरवाचित किया है ।

मैं व्यक्तिगत रूप से नवरत्न प्रकाशन के उन सहयोगियों का आभार मानती हूँ, जिन्होंने परोक्ष अपरोक्ष रूप से उसे बल दिया है । भविष्य मे भी उनके हार्दिक सहयोग की अपेक्षा है ।

भाई श्री अमरनाथ गुजल की आभारी हूँ ही जिनके प्रयत्न के बिना इसका शीघ्र प्रकाशन सम्भव नहीं होता ।

शानि भट्टाचार्य
प्रबंधिका

मैं इतना ही कहूँगा

य मरी ऐतिहासिक कहानियाँ है । इसक पूव इतिहास को लेकर मेर दो उप-यास 'कसरिया पगडी मोर खून का टीका' प्रकाशित हो चुके है ।

कहानिया प्राय राजस्थान क इतिहास से सम्बन्धित हैं, जो विभिन्न श्रेष्ठ पत्रिकाया म छप कर पाठका द्वारा प्रशमित हो चुकी हैं ।

सभी की राय स्वागत योग्य है ।

यावद्द नामा 'चन्द्र'
साल की होली
याकानर

अनुक्रम

• गोशू-गाडी के यात्री	६
• महारावल	१६
• मैं बूदी नहीं दूगा	२७
• प्रीत	३७
• एक और नूरजहाँ	५०
• चौहान और पठान	६३
• मुक्ति	७२
• एक नयी रावणा	८४
• गाहजहाँ का सदेह	९६
• क्षण भर की दुल्हन	१०२



गोरू-गाडी के यात्री

रात का अंधियारा बीकानेर के मजबूत पथरीले बुजों, नगर की मजबूत चहारदीवारी और कच्चे पक्के भवनों एवं हवेलियों से होता हुआ रामजी लुहार के गोरू-गाडी घर पर आकर ठहर गया। रामजी को आज रह रहकर अपने वे पूवज याद आ रहे थे जिनके त्याग और बलिदान ने एक बार मेवाड के धून धूसरित होते हुए गौरव को पुनः जागृत कर दिया था। उनकी इस घोषणा ने सुपुत्र मूलवशियों में एक नया जोश और स्फूर्ति भर दी थी कि जब तक हम चित्तौड़ नहीं जीत लेंगे तब तक चित्तौड़ की धरती पर अपना कदम नहीं रखेंगे। राणाजी की सौगंध हमारी सौगंध होगी और इस महती घोषणा के पश्चात् ये बीर लुहार अपने घर-परिवार को गोरू-गाडी में लादकर चल पडे। - अनेक

कष्टो आपदाघो घोर अमावो को झेलते हुए ये गाढ़िया लुहार जहाँ तहाँ बिलर गये ।

उसी दलित बग की गर्विली सन्तान रामजी आज अपनी गाड़ी के नीचे सम्पूर्ण परिवार के साथ निर्जीव-मा बैठा था । पाम म एक दीया जल रहा था — धीमा धीमा, हलका हलका ।

उसकी पत्नी अपने नन्ह-नन्हे बच्चों को मुला चुकी थी । उसकी बड़ी लडकी अपने भाई के साथ लोहे की छुरी बनान म निमग्न थी । धौकनी की हवा से अगारे तीव्र गति से जल रह थे ।

रामजी की पत्नी जेठा लाल रंग की छीट का झोड़ना घोर सहगा पहने हुए थी । उसका लहगा १६ गज का था और उसके पाँवों म दो दो सर की चाँदी की कड़ियाँ घोर आवले नामक गहन पड हुए थे । काना मे चाँदी की बाणियाँ थी जिनमे पतियाँ लटक रही थी । नाक म चाँदी का काना था । योडा सा घुघट उसने निवान रखा था । वह घुघट के भीतर से ही मद्धिम स्वर म बोली इस तरह मन मारकर बठने से क्या होगा ? आपने मुवद भी नाना नहीं साया है ।

'क्या कश्च कम्पू की माँ ? कौर गल के नाच से उतरता ही नही । बीकानेर पर गम्भीर की सना चड आघी है । बीर-बीरुरे राठोड घोर सामत अपनी सनवारा को म्याना म मुनाकर कम्पूके के नग म पडे हैं । महाराज बाणगाह की सवा म दनिग की धार गय हुए हैं । एमी म्विनि म मुमने बीकानेर पर जोप्रपुर वाला के अत्याचार नही देग जाते ।

उसकी पत्नी जग न्न भारी भरकम साना का नट्टा समझ पायी । टुकुर टुकुर घुघन प्रताग म अपने पति के उगम मुह को दसती रही । पति का घनी-बाला टांडा घोर मू छें बिन गवरा थी । कथा को स्पग करन लठ वाच घाग म्ग-मूगे थ । पमाने म भागी घोर मो ी मगतवनी क बगें पूर बध हुन नरां थ ।

गम्मार गान्ति था । उस गान्ति का मग कर रही थी घौतनी की पं-पं का आवाज ।

रामजी अपने आप में खोया हुआ था। उसका सस्ते छोटा बच्चा गोरू गाड़ी के ऊपर सोया था। वह अप्रत्याशित रूप से रो पड़ा। क्षण भर के लिए उसका ध्यान भंग हो गया और जेठा गाड़ी के नीचे से निकलकर अपने बच्चे की गोद में लेकर रमाने लगी।

तभी शेरू न आकर खबर दी कि जोधपुर की सेना ने आज दो निर्दोष ग्रामीणा को मौत के घाट उतार दिया है। उनकी फौजें बड़ा अत्याचार कर रही हैं।

रामजी की नसों तन गयीं। उसके नेत्र रक्तिम हो उठे। बाजू फड़क उठे। वह व्यथा से पीड़ित सा होकर बोला "काश आज महाराज होते। उनके होते हुए जोधपुर नरंग बीकानेर की भोर भ्राँख नहीं उठा सकते थे। इस तरह की कामरता बीकानेर का सबनाश कर देगी।" वह अवश हो उठा। अपनी गाड़ी की भोर देखकर वह सांचने लगा—इसी गाड़ी को अपना घर सप्तर समझकर वह चितौड़ से चलता फिरता भटकता यहाँ आया था।

यहाँ आन के बाद रामजी पहले बीकानेर नरेश की सेना में रहा और बाद में हथियारों के कारखाने में काम करने लगा। वष पर वष बीत गये। रामजी ने बीकानेर नरेश के नमक-पानी से अपने परिवार का पालन पोषण किया। आज उसके होने हुए जोधपुर की सेना बीकानेर की पगड़ी उछाल गयी थी। उनका गौरव अब मयादा की रौंद रही थी। उगने सोचा कि इससे तो मर जाना अच्छा है।

एक विभीषण ने रावण-जैसे महाबली कमयोगी और महापण्डित की सोने की लका को मिटा दिया था और बीकानेर में आज कई विभीषण उत्पन्न हो गए थे। लाडलू में जोधपुर नरेश अजीतसिंह जी ने बीदावत ठाकुर तजसिंहान अब अन्य मरुतारों को अपने पक्ष में प्रलोभन देकर मिला लिया था। गोरालपुरा के कमसेन तथा बीकानेर के विहारीनास अजीत सिंह जी के प्रलोभन में नहीं आये, फलस्वरूप उन्हें उसी क्षण बंद कर लिया गया।

बिहारीदास न तेजसिंहात से बडबती हुई भावाज म कहा था—

गदार ! तू राजपूत नहीं है । अपनी मातृ भूमि स दगा ! धू है तेरी राजपूताई पर । जरूर तूने किसी गाला (गुलाम) का दूध पिया है ।”

इस बीच कमसेन ने अपने विश्वस्त गुप्तचर के साथ यद् खबर बीकानेर भिजवा दी थी किन्तु राज्यलिप्ता मे अर्धे अजीतसिंह ने रघुनाथ भण्डारी को बड़ी सेना देकर तुरन्त बीकानेर रवाना कर दिया । इस अप्रत्याशित आक्रमण ने बीकानेर की हिम्मत पस्त कर दी और जोधपुरी सेना ने बीकानेर को घेरकर उत्पात मचाना शुरू कर दिया ।

बीकानेर पर आतक छा गया । राजकुमार जोरावरसिंह भी उन दिना बीकानेर म उपस्थित नहीं थे । ऐसी स्थिति म वहाँ सलबली मच गयी ।

रामजी सुहार को यह दुःखद स्थिति सटन नहीं हुई । उसे मालम था कि शस्त्रागार म हथियारा की कमी नहीं है । ऐसी स्थिति म यदि बीकानेर क समस्त सामन्त और राजपूत युद्ध भूमि में आ डट ता जोधपुरी सेना का सामना घबड़ी तरह से किया जा सकता है ।

रामजी चिन्तातुर हा उठा । उनने एक बटार बगल म छिपायी और निश्चिन्त पन ।

बीकानेर गढ़ क रक्षक थ सांथना राजपूत । शौनतसिंह उनका सरदार था । रामजी न उनक समन जाकर निवृत्त किया ठाकुर मा । महाराज क सरहानेरो म बीकानेर क शौथ का इम तरह न मित्रने निशा बाध । धान अपने भाई-बधुभा का आश्रित करें । उह युद्ध क लिए तयार करें । हम मत्र मित्रर अपना दग का रणा करेंगे ।

शौनतसिंह ने अनमथता प्रकट का यह सम्भव नहीं है । जोधपुरी सेना का सामना सब नहीं किया ता सकता ।

यद् अमरमर क उत्पत्तिह क पाम गया । प्रायता की पर बाई नर नहीं हुआ । सभी बड सरदार या ता गुप्त रूप स जोधपुर धाना स तन मय थ मा वे एसी विपम स्थिति म युद्ध करना ही नहा चाहत थ ।

पराजय सम्मुख खड़ी थी ।

रामजी हताश होकर वापिस अपने गाड़ी घर पर लौट आया । उसकी पत्नी जेठा अभी भी उमकी प्रतीक्षा में बठी थी । सनाटा और गहरा हो गया था । सभी बच्चे सो गये थे ।

उसकी पत्नी ने पूछा “अब क्या होगा ? बल जोधपुर वाले नगर पर जोरदार हमला करेंगे ।”

रामजी ने कहा ‘वीरा को साँप सूँघ गया है । ये राजपूत हमेशा आपस में लड़कर अपने आपको कमजोर करने आए हैं लेकिन मैं मेवाडी हूँ । मेरे पूज्या ने कभी अपनी माँ के दूध का नहीं लजाया है । मैं एक बार फिर अपना बलिदान करूँगा । मैं अबेला ही युद्ध करूँगा ।’

जेठा हतप्रभ रह गयी ।

बुझे हुए दीय को जलाकर उमने अपने पति को देखा । उसने नेत्रों में खून उतर आया था ।

‘ मैं जाते जी जोधपुर वालों को बीकानेर की ओर नहीं आने दूँगा ।”

आप पागल हो गए हैं ? अबेला चना भाड़ नहीं भूँसता ।’

‘ तो क्या रामजी जीते जी अपनी माँ-बहिनो की लाज जाते देखेगा ? नहीं नहीं मैं बढती हुई जोधपुरी सेना को रोकूँगा और अकेला रोकूँगा ।”

रामजी उमी समय एक बूढ़े ठाकुर रामसिंह जी के डेरे पर गया । बूढ़े ठाकुर का चेहरा तेजस्वी था । रामजी को वह पहचानते थे । जब रामजी ने अपना मतलब उनके समक्ष प्रकट किया तब उन्होंने उस अपना अश्व तलवार भाना, कवच, बन्दूक और ढाल देते हुए कहा, ‘ तुम्हारा बलिदान गाय इन क्षत्रियों के रक्त में उबाल ला दे । एक बार भगवान राम ने मर्यादा की रक्षा की थी, आज तुम इस धरा की मर्यादा की रक्षा करना । चाहो तो मैं युद्ध भूमि में चल सकता हूँ ।”

रामजी की भुजायें इस सम्मान से पटवने लगीं । उसने जोर से करणी माता की जयकार की और वहाँ से लौट आया ।

बिहारीदास ने तेजसिंहान म कडवती हुई आवाज म कहा था—

“गद्दार ! तू राजपूत नहीं है । अपना मात भूमि म दगा ! धू है तेरी रजपूताई पर । जरूर तूने किमी गोत्री (गुनाम) का दूष किया है ।”

इस बीच कमसन ने अपने विद्वान् गुप्तचर क साथ यह खबर बाबा नेर भिजवा दी थी, किन्तु राज्यनिष्ठा म अर्धे अत्रीतसिंह न रघुनाथ भण्णारी को बड़ी सेना दवर तुरन्त बीकानेर खाना कर लिया । इस अप्रत्यागित आक्रमण ने बीकानेर का हिम्मत पन्न कर दी और जोधपुरी सेना ने बीकानेर को घेरकर उत्पान मचाना शुरू कर लिया ।

बीकानेर पर आतक छा गया । राजकुमार जोरावरसिंह भी उन दिन बीकानेर म उपस्थित नहीं थे । ऐसी स्थिति म वही खलबली मच गयी ।

रामजी लुहार को यह दुखद स्थिति सहन नहीं हुई । उमे मानूम था कि गस्त्रागार म हथियारो की कमी नहा है । ऐसी स्थिति म यदि बीकानेर के समस्त सामन्त और राजपूत युद्ध भूमि में आ डट ना जोधपुरा सेना का सामना अच्छी तरह स किया जा सकता है ।

रामजी चिन्तानुर हो उठा । उमने एक कटार बगल म छिपायी और निकल पना ।

बीकानेर गढ़ के रक्षक थे सांखला राजपूत । दोनतसिंह उनका सरदार था । रामजी न उसके समक्ष जाकर निवन्त किया ठाकुर सा । महाराज की गरहाजरी म बीकानेर क गौरव को इस तरह न मिटने दिया जाय । आप अपने भाई-बचुष्मा का आह्वान करें । उन्हें युद्ध के लिए तयार करें । हम सब मिलकर अपने देग की रक्षा करेंगे ।

दोनतसिंह ने असमयता प्रकट की “यह सम्भव नहा है । जोधपुरी सेना का सामना अब नहीं किया जा सकता ।”

यह जमनमर क उर्यसिंह क पास गया । प्रायना की पर कोई धमर नहीं हुआ । सभी बडे सरदार या सा गुप्त रूप स जोधपुर बाला स मिल गये थ या व ऐसी विपम स्थिति म युद्ध करना ही नहीं चाहते थे ।

पराजय सम्मुख खड़ी थी ।

रामजी हताश होकर बापिम अपने गाड़ी घर पर लौट आया । उसकी पत्नी जेठा अभी भी उसकी प्रतीक्षा म बँठी थी । सानाटा और गहरा हो गया था । सभी बच्चे सो गये थे ।

उसकी पत्नी ने पूछा "अब क्या होगा ? बल जोधपुर वाले नगर पर जोरदार हमला करेंगे ।

रामजी ने कहा "वीरा की माँप सूष गया है । ये राजपूत हमेशा आपस म लडकर अपने आपको कमजोर करते घाए हैं, लेकिन मैं मेवाड़ी हूँ । मेरे पूवजा न कमी अपनी माँ के दूध को नहीं लजाया है । मैं एक बार फिर अपना बलिदान करूँगा । मैं अकेला ही युद्ध करूँगा ।"

जेठा हतप्रभ रह गयी ।

बुझे हुए दीप को जलाकर उमने अपने पति को देखा । उसके नेत्रा में खून उतर आया था ।

"मैं जीते जी जोधपुर वाले को बीकानेर की ओर नहीं आने दूँगा ।"

'आप पागल हो गए हैं ? अकलाचना भाड नहीं भूजता ।'

'तो क्या रामजी जीते जी अपनी माँ-बहिनो की लाज जाते देखेगा ? नहीं नहीं मैं बढती हुई जोधपुरी सेना को रोकूँगा और अकेला रोकूँगा ।'

रामजी उमी समय एक बूडे ठाकुर रामसिंह जी के डेरे पर गया । बूडे ठाकुर का चेहरा तेजस्वी था । रामजी को वह पहचानते थे । जब रामजी न अपना मन्त्रय उनक समक्ष प्रकट किया तब उन्होंने उसे अपना अश्व तलवार, भाला, कवच, बरूक और ढाल देते हुए कहा, "तुम्हारा बलिगाता गायद इन शत्रिया के रवन म उबाल ला दे । एक बार भगवान राम ने मर्यादा की रक्षा की थी, आज तुम इस धरा की मर्यादा की रक्षा करना । चाहे तो मैं युद्ध भूमि म चल सकता हूँ ।"

रामजी की भुजायें इस सम्मान से फटकने लगीं । उसने जोर से करणी माता की जयकार की और वहाँ से लौट आया ।

नगर के दरवाजे बंद हो चुके थे ।

रामसिंह जी ने ठाकुर जंतसी पट्टिहार के यहाँ सन्नेगा पहुँचाया ।
उन्होंने कहलाया, "भाज एक मेवाड़ी लुहार राठोडा की पगड़ी को पद
दलित करेगा । धिक्कार है सिंहीं की सन्तान को ।"

किन्तु प्रभात तक कोई भी सामंत सरदार युद्ध के लिए तत्पर दिखाई
नहीं पडा । रामजी ने सवप्रयम सूय की प्रचना की । उसकी पत्नी जेठा
ने उसे धनु भरी विदाई दी । उसके छोटे-छोटे बच्चे अपने बाप को एक
सेनानी के भेष में देखकर हृय से मचल रहे थे ।

उसकी बड़ी लडकी सबती ने आकर पूछा, "बापू लड़ाई में आपके
साथ कौन होगा ?"

राजभक्त रामजी ने कहा 'बेटी, वीर के साथ दो ही चीज रहती
हैं—अपनी तलवार और अपने स्वामी की आन पर मिटने की साथ ।"

'आप कब वापस आयेंगे ?

जेठा का तो जैसे कलेजा ही फट पडा । उसकी सिसकियाँ सुनकर
सभी बच्चे सहम गये ।

रामजी जेठा के समीप गया । भर्रायी आवाज में बोला 'सेवनी की
माँ ! युद्ध में जाते हुए वीर को सिसकियाँ मत सुनाओ । मैं जिंदा रहा तो
लौट आऊँगा । यदि मर जाऊँ तो समझना कि तरे पति ने जिसका नमक
खाया, उसके नमक के हक को सचाई के साथ भत्ता कर लिया ।'

उसका तीन वर्षीय बेटा भागा भागा आया 'मेरे लिए क्या लाओगे?'

'सन्तुओ के सिर ।"

वह खुशी से तालियाँ बजाने लगा ।

रामजी ने घोड़े पर सवार होने के पहले एक बार अपनी गोरू-गाड़ी
के घर को देखा । पून स नह-नह बच्चों को देखा । धूपट में लिपटी
पत्नी को देखा । फिर फुरती से 'जय एकनिग, 'जय माता जी के नारे
समात हुए प्रस्थान कर गया ।

जस ही किले के आग से गुजरा वसे ही चन्द सनिको ने उससे पूछा

“कहाँ जा रहे हो भाई ?”

वह कठोर स्वर में बोला, “दीकानेर के क्षत्रिय अपनी माँ धरती की इज्जत नहीं रख पा रहे हैं, इसलिए एक लुहार उसकी रक्षा के लिए भवेला ही लड़ने जा रहा है ?”

उसने एक मिरासी को बुलाया, उसे नगाडा बजाने को कहा । मिरासी नगाडा बजाता हुआ उसके आगे आगे चलने लगा । वह हर व्यक्ति से उपयुक्त शब्द कहता हुआ चल रहा था ।

वह जान हथेली पर रखे चल रहा था । जालीदार खिडकी में सड़ी भुकरका के ठाकुर पृथ्वीराज की पत्नी ने रामजी की घोषणा सुनी । उसकी नसों का खून उबल पड़ा । वह अपने पति के सामने गयी । अफीम के नशे में खूर अपने पति को सलकारा और फटकार सुनाई । मलसीसर के ठाकुर हिर्दासिंह की शक्ति को ताने दिए गए पर वे भी मरणासन्न से पड़े रहे ।

नगर का द्वार बंद था । वहाँ अर्ध सैनिक तैनात थे । उनकी दृष्टि उन घूल भरे बादलों पर लगी हुई थी जो जोधपुरी सेना के आने की सूचना दे रहे थे । सैनिकों के पास कुछ बंदूकें थी । रामजी ने अपनी बंदूक संभाली ।

उसने द्वारपाल से निवेदन किया, “दरवाजा खोल दो । मैं युद्ध भूमि में जाना चाहता हूँ ।”

“अवेले ?”

“हाँ ।”

“क्यों ?”

“क्योंकि राठौरों ने धूडियाँ पहन ली हैं । उनके रक्त में गरत नहीं, गहारी घुम गयी है । वे लालच में पड़कर उस मिट्टी को बेचने के लिए तयार हैं जिस मिट्टी ने उन्हें पदा किया है ।”

“क्या बकते हो ?” एक सैनिक भल्लाया ।

“ठीक कह रहा हूँ, वरना आज दीकानेर की धीर क्षत्रु सेना इस

तरह बढ़ती चली जाती ? आज सब शत्रुघा से मिल गए हैं । महाराज यहाँ नहीं हैं । महाराज कुबर भी बाहर गए हुए हैं । एमी म्यति में हमारा क्या कनव्य हो सकता है ? अपने देग पर हमन हँसन बलिगन हो जाना । और आप

पहरेदार चीला— 'हम गद्दार नहीं हैं ।'

' फिर रणभेरी बजाओ, तुरही की गूँज से घातग हिला दो । मैं अकेला इस किले की रक्षा करूँगा । मैं जीते जी इस चहारदीवारी में शत्रुघा को घुसने नहीं दूँगा । आप मरा विश्वास करें ।'

पहरेदार ने जोश में दरवाजा खोल दिया । दरवाजे के रणाय सनिको ने रणभेरी के नाद से दिग दिगत को गुंजा दिया ।

"एक लुहार जोधपुरी फौज से अकेला लडेगा । सामन ठाकुरा, सरदारो के लिए डूब मरने की बात है ।" बस यही चर्चा, यही बात । ठाकुरानियो ने चूडियाँ और लहंगे ला लाकर अपने पनियो के आगे रख दिए । राजपूती रक्त खोल उठा । भुकरवा के ठाकुर पृथ्वीराज और मल सीसर के हिंसिह ने वागडोर संभाली । वे वीरो को एकत्रित करने लगे ।

तब तक जोधपुरी सेना चहारदीवारी के नजदीक आ गई थी । रामजी पर तो जैसे उन्माद छा गया । जब रघुनाथ भडारी ने अपनी सज्जत सेना को रोक कर दरवाजे की ओर देखा तो वह विस्मित रह गया । एक अकेला सिपाही खड़ा था ।

भडारी ने सावधान होकर अपनी सेना से कहा, ' कोई आगे न बढ़े । धार करने के पहले मेरी आज्ञा की प्रतीक्षा करें ।' और उसने रामजी को ललकारा— "खर चाहते हो तो अपने आप को हमारे हवाल करदो । हम तुम्हें क्षमा कर देंगे ।'

रामजी ने ललकार कर कहा, ' बेहतर यही होगा कि आप जिस पांव घाये हैं उसी पांव लौट जायें वरना आज कोई जीवित नहीं बचेगा ।'

भडारी ने पुन कहा 'क्यों अकेले अपनी जान गँवा रहे हो ?'

रामजी गरजकर बोला 'कौन अकेला है ? मेरे पीछे हजारों लोग हैं ।'

भडारी ने अपने सैनिकों को आगे बढ़ने के लिए कहा। रामजी के सिद्धहस्त हाथा ने बंदूक समाली और फायर करने शुरू किए। उसने एक बड़ी गिला के पीछे अपना मोर्चा लगाया। पर जोधपुरी सेना ने उसे थोड़ी देर में घेर लिया। उसकी बंदूक शत्रु की गोली से टूट गयी। तब वह अपनी तलवार लेकर उन पर टूट पड़ा। उसने कई शत्रुओं को आहत व घराशायी किया। अंत में वह निदयतापूर्वक कत्ल कर दिया गया। उसका सिर घड़ से अलग एक कोने में लुढ़क गया। एक साथ दत्तनी तलवारें पड़ी कि शरीर के टुकड़े टुकड़े हो गए।

द्वार रक्षक का खून खोल उठा। वे मोर्चा लगा कर डट गए। दो बकादार पडिहार सैनिकों ने पृथ्वीराज एवं हिंसिंह को जाकर यह विस्सा सुनाया। सोये सिंह लुहार के बलिदान से जाग उठे जैसा उस लुहार की मौत ने उनके मुह पर तमाचा जड़ दिया हो। घर घर भ्रक्केले लुहार के बलिदान की गाथा व गीत गूज उठे। राजपूत घरा के बाहर निकल आए। सौम्य का युद्ध बंद रहा। सुबह की पहली किरण के साथ ही बीकानेर की फौज ने पृथ्वीराज एवं हिंसिंह के सेनापतित्व में जोधपुर की सेना पर हमला बोल दिया। जोधपुर की सेना में खलबली मच गयी। बीकानेर के लोग भयकर रूप से लड़ लगे थे, हर अक्केला राजपूत रामजी लुहार है।

जोधपुरी सेना के पाँव उखड़न लगे। पराजय के भय से भडारी बीकानेर वालों से संधि कर लौट पड़ा।

रण क्षेत्र में डेरो सिर एवं घड़ पड़े थे। लोग अपने अपने सम्बन्धियों की लाशें खोज रहे थे।

एकाएक चपू और शेरू नजर आए। दोनों नगे पाँव रामजी की लाश ढूँढ रहे थे। क्षत विक्षत लाशों को देखकर चपू काप रहा था। कभी कभी चीख उठता था। शेरू उसे साहस बँधाता था।

एकाएक चपू ने कहा, "वह रहा वापू का सिर।"

फिर दोनों ने सिर को एक कपड़े में बाँधा और घर चले आए।

परम्परा को उसी मात मर्यादा से निभा रहा था। यवन हताग हो गए थे। भागी रातपूना को विजय करना अब उनके बग वा रोग नहा रहा, पर विलची ता बग हुगी था और उमर दुराधे अगि थ।

वह बार-बार परमा भेगता था— विलज्जा न गिरस्त सावर लोटना न्हा सीसा। उसके ह्वम भी तामील होनी ही चाहिए। अपने आप को बर्बाद करो या दुमनो का नस्तनाद ।

उसकी इन आना का पालन करने क लिए महबूब साँ अली साँ फराद सा और काफूर बरों से जसलमर म डटे हुए थ।

काफूर अत्य त बीर और कुशल राजनीतिज्ञ था, पर साथ ही घम परायण और सच्चा भी। उसम नैतिकता थी और नतिवता के साथ बचनो क पालन का क्षमता।

जब महारावल मूलराज के भाइ रतनसिंह जी न एर बार अप्रत्या गित आत्रमण किया और काफूर के प्राणो पर आ बनी, तब काफूर ने उनसे अभयदान माँगा। रतनसिंह जी ने विवग काफूर को प्राणदान देने हुए कहा— ' हम क्षत्रिय विवग गनु पर बार नही करते । सेनापतिजी आप खुशी से अपने डेरे पर जा सने हैं।

काफूर इस अभयदान पर पिघल गया। रतनसिंह जी को प्रगाढ आलिगन म आवद्ध करता हुआ, विगलित स्वर म वह बोला— "इस अहसान का बग मँ जिगी म नही चुका सकता, फिर भी आपसे वापस करता हूँ कि फज क अलावा आप अब कभी इस नाबीज से कुछ भी माँगें वह खुशी खुशी देगा । मौका पडने पर अपनी जान तक मुदान कर देगा ।

इस पन्ना क बाद काफूर और रतनसिंह जी म गहरी दोस्ती हो गई। जब जब मुद्द ब न होना तब-तब रतनसिंह जी विल की दीवार की युजिया म ररसी की सीढी लटका कर आ जाते और दोनो मित्र घटा वार्ताबाप करत ।

आज भी एसाही हुआ। अधिकार के बढ़ते-बढ़ते रतनसिंह जी काफूर

के शिविर में घा गए। मशालों की रोशनी में शराब के जाम उठने लगे। रतनसिंह जी शराब की जगह कसूमबा पीते थे। उनके लिए रुफीम को ढोलकर कसूमबा बनाया जाता था।

दोनों दोस्त चौपड़ और शतरंज के खेला में निमग्न हो जाते। राजनीति की कोई चर्चा नहीं होती। चर्चा करने पर जैसे एक तरह का प्रतिबंध ही था। घरदार, गृहस्थ और नितांत व्यक्तिगत चर्चाएँ ही उनके बीच होती थीं।

परन्तु फरीद खा दुष्ट प्रकृति का था। दोनों के बीच आकर विपाकत वातावरण की सजना किए बिना नहीं रहता था। अपनी चगेज मूछा पर हाथ फेरता हुआ, वह शिविर में आता। उसके काले मढ़े होठों पर कुटिल मुसकान रहती। आकर वह पूछता—“कौन किसकी मात दे रहा है ?”

काफूर शतरंज की मोहरो पर अपनी नजर जमाए हुए कहता—
“अभी तक तो छोटे रावल ही मात दे रहे हैं।”

“इतने सालों से इनसे मात खाना ठाक नहीं है मियाँ।

बात का तात्पर्य समझकर रतनसिंह जी तुरंत अपनी मूछा पर ताव देकर कहते—“पांच दिन पहले तो आपका सजाना लूट लिया गया था।

अपने आलीशाना को लिए दीजिएगा कि जमलमेर का किला न आज फतह होगा न कल। भाटी राजपूतों के गौरव की गरिमा को आसानी से नहीं मिटाया जा सकता।”

फरीद खाँ स्तब्ध रह जाता। इनकी रसम ये लोग कहीं से लाते हैं? क्या इतने झखड़ भठार किले में हैं? और समय गुजरता जाता। फिर आक्रमण होते। यवन अपनी समस्त शक्ति, रण-बौशल और साहस के साथ आक्रमण करते, पर प्रतिरोध में भाटी वीर उन्हें ऐसा मुँह-तोड़ जवाब देते कि उनको लेने के-देने पड़ जाते। अजेय दुर्ग अजेय ही बना रहता।

फिर कुछ दिनों के युद्ध के पश्चात् विराम। पूण शांति।

इस तरह पूर बारह वष बीत गए । भाटी राजपूत 'दूग' यवनों की किले के बाहर छिपे रूप से रसद लूटता रहता । यवन सेना के समग्र भ्रव रसद की समस्या सही होने लगी । महबूब खाँ विचिन्तित हो गया । उसने काफी सोच विचार कर लौटना ही बेहतर समझा ।

गिदिर म गुप्त मन्त्रणा हुई । सारे सेनापति एकत्र हुए ।

महबूब खाँ ने निरागा से कहा—“भव मुमकिन नहीं कि इम महा रावल का शिकस्त दे सकें । भव हमारा लौटना ही बेहतर रहेगा ।”

काफूर ने उसकी बात का समर्थन किया—“एक छोटी-सी बात को लेकर फौज की इस तरह तबाही कराना ज्यादा ठीक नहीं है । आलम पनाह जिद्दी हैं । जो जान पकड़ लेते हैं उसे छोड़ते ही नहीं । इधर जसलमेर और उधर चित्तौड़ ।”

फरीद खाँ ने व्यग्य मिश्रित स्वर में कहा— आप बाग़शाह सलामत को जिद्दी कैसे नहीं कहेंगे ? महारावल मूलराज के छोटे भाई रतनसिंह आप के दोस्त जो ठहरे फिर आप सब मेरी एक बात का जवाब देंगे ? क्या इतने साला के बाद कोई फसला किए बिना लौटना हम सब के लिए डूब मरन की बात नहीं ? क्या मुँह लेकर हम आलमपनाह के सामने जाएंगे ?

अली खाँ बड़ी ही गम्भीर प्रवृत्ति का था । उसने भी फरीद खाँ की इस बात का समर्थन किया । वह बोला— इस किले की हिफाजत ऐसे बहादुर कर रहे हैं जो मौत को मनाक समझते हैं । अब हम किले का रान जाने बिना उस कदापि पतन नहीं कर सकत ।

फरीद खाँ ने उत्साह से कहा— खाँ साहब फरीद ने यह इन्तजाम भी कर लिया है । मैंने भीमसिंह भाटी सरदार को अपने में मिला लिया है । वह कत तक मुमकिन है किले का सारा राज लेकर आ जाएगा ।

काफूर व मस्तिष्क पर जैसे किसी ने हथौड़ा मार दिया हो । वह प्रश्नवाचक दृष्टि से फरीद खाँ को देखने लगा । फरीद खाँ ने भौंहेँ टेढ़ी करके कहा—‘काफूर भाईजान यह राज राज ही रहे । नमकहरामी

वफादार लाग नहीं करते ।”

“आप बेफिक्र रहे । यह राज राज ही रहेगा ।”

श्रीर रात को जब रतनसिंह जी उससे मिलने के लिए आए तब वह अपने साथ अपने दोनो बेटो को भी लाए । घबसी और बान्हुड को सम्बोधन करके रावल ने कहा—“अपने चाचा को प्रणाम करो । दोनो बेटो ने काफूर को प्रणाम किया । काफूर ने उन्हें अपने गले से लगाते हुए कहा— आग्रो बेटो, तुम लोगो की क्या खातिर-तबज्जो करूँ ?”

“इनकी हिफाजत अब आपका करनी है । काफूर भैया, इहे मैं आपके हवाते करवे जा रहा हूँ क्योंकि भीमसिंह भाटी आपके सिपाहियो को किले का भेद देने के लिए आ पहुँचा है । हम चाहे वचें न वचें, पर आपको इन बच्चा की देख भाल करनी होगी । दोस्त ! ये मेरी अमानत है । इनकी रक्षा करना आपका धम है ।”

काफूर ने उन शानो को अपने बक्ष मे समेट लिया । दडता से वह बोला—‘ मैं अपने ही बच्चा की तरह इन दोना को रखूंगा । मेरे जीते जी इनका कोई गल भी वाँका नहीं कर सकता ।’

‘ मुझे ऐसी ही उम्मीद है । अच्छा अब मैं चला । अब हमारी मुलाकान युद्ध भूमि मे ही होगी ।

दोना ने अश्रु भरी किन्नाई ली ।

फरीद खाँ निबिह म आया तो उसन उन लडको को दखा । वह काफूर से बोला—‘ इन काफिरो को तुम दूध पिलाकर बडा करोगे ? ’

‘ कौन काफिर हे ? य बेगुनाह लडक ? फरीद खाँ ! फज के हद से मैं नहीं गुजरूँगा, पर इसागियत स भी नहीं गिरूँगा । जानते हो, रावल मेरा दास्त है एर बार उमने मुझे जान बरणी थी, उसके बडले का वस्त आज ही आया है । समझे !”

वह दोनो लडका को भीतर ले गया ।

रात जैसे दर दर कर गुजर रही थी ।

जसलमेर के घोर जान गए थे कि भीमसिंह भाटी, जो गत तीन दिन

इनाम ! जलील कुत्ते देरा इस घाग को । इस घाग म तेरी बीवी भी होगी तरा बच्चा भी होगा । तू हबस का गुलाम है । तूने कभी यह नहीं सोचा कि इननी बर्बानी बे वाग क्या बचेगा ? मुझे नफरत है ऐसे इन्सानों से । बहादुर हैं वे लोग, जो अपने मादरेवनन पर हँसते हसते मिट जाते हैं । सिपाहियो ! इस जलील इन्सान को इस घाग मे भोंक दो । जो अपनी माँ का नहीं हुषा, वह पराया का कसे होगा ?”

भीमसिंह चीसता चिल्लाता अभय माँगता रहा पर काफूर ने उसे घाग म भोंक दिया ।

फिर वह चुपचाप टूट कर बैठ गया । उस मूने और निजत किले को देखता रहा और फिर सिसक पडा । मन-ही मन प्रतिज्ञा करता हुषा बोला—“दोस्त रतन ! मैं फज म बँधा था फिर भी आपके दोनो लडकों को हिफाजत स रखूँगा । वे दोना अब मेरी अमानत हैं और एक दिन उहे इसी किले का स्वामी बनाऊँगा !”

और समय जाने पर घडसी जसलमेर का महारावल बना ।



मैं बू दी नहीं दूँगा

‘ मैं बू दी नहीं दूँगा । कुम्भा वीरसी ने भीम-गजना की, ‘चाहे बू दी असली हो या नक्ली । बू दी नाम की रक्षा करना मेरा धम और वशीय गौरव है ।’

रात्रि का तिमिराचल ससृति पर छा गया था । आकाश तारो से जगमगाने लगा था । कुम्भा वीरसी अपने शयनकक्ष मे व्यप्रता से चहल-चदभी कर रहा था । रजत दीवट पर इत्र का दीया जल रहा था । उसकी सुवास से वक्ष सुगन्धित था । गवाक्षो के रंगमौ पर्दों पर जड़े हुए सलमे सितारे काँपते हुए प्रकाश से झलमला रहे थ ।

उसकी पत्नी इम गजना से महम गयी । वह निस्पन्द-सी हो गयी । उसके मदरीले नयनो मे प्रश्न नाच उठा । कुछ बोलना चाहती थी, पर बोल नहीं पायी ।

'भाप ठकुराणी सा, इस तरह स्तब्ध खड़ी है, इस में समझ रहा हूँ। किन्तु मैं आपको भी स्पष्ट रूप से बता दना चाहता हूँ कि मैं बूढ़ी नहीं दूंगा कदापि नहीं दूंगा।'

ठकुराणी उसके थोड़े निकट आयी। उसके पाँवों की पैजनियाँ धीरे धीरे बजकर शांत हो गयीं। अपने कपड़े हुए स्वामी की भुजा का मदुल स्पष्ट करके वह मन्द स्वर में बोली, 'भाप यय उत्तेजित मत होइय। बूढ़ी का कौन ल सकता है? आज सदा तिन पूव सिसोत्रिया वीर हाडा सरदारो से पराजित होकर भाये हैं। बूढ़ी नरेश वीरसिंह न स्वयं राणा लाला जी की भग भवानी को खडित किया है।'

हाडा वीर कुम्भा वीरसी शय्या के पास गये। पल भर के लिए उनकी दृष्टि शय्या पर बिछे मखमली गद्दों पर गयी। पलक के चाँदी के पाये घमक रहे थे। पायों का निचला हिस्सा सिंह की शक्ति का था। वे घम से उस पर बठ गये। गहरी सास ली। अपनी बाँकडली मूछा पर ताव दिया। पूववन स्वर में किंचित मन्द स्वर में बोले 'यही पद्वाताप राणा जी और उनके सामन्त योद्धाओं को सता रहा है। अपनी पराजय व भयमान की आग वे मेरे रक्त-गव और वीर्य गौरव को मिटाकर ठंडा करना चाहते हैं यह मैं कदापि नहीं हूँने दूंगा। मैं भी हाडा राजपूत हूँ मेरे शोणित में भी क्षत्रिय रक्त दौड़ रहा है।'

लेकिन मैं आपको बात का तात्पर्य नहीं समझी। ठकुराणी उनके समीप बठ गयी। श्वेत मलमल की बगलबन्दी पसीने से भीग गयी थी। उसने दासी को आवाज दी। दासी तुरन्त नतमस्तक होकर उपस्थित हुई। ठकुर सा को पक्षा भलो।' आज्ञा दी ठकुराणी ने।

दासी पल भर में मोर के पक्षों का बना पक्षा ले आयी जिसकी मूठ चाँदी की थी। वह तीव्र गति से पक्षा करने लगी। यद्यपि इस बीच गहरी निस्तब्धता छायी हुई थी। चाँद भी नहीं बोल रहा था।

ठकुराणी उठी। सज्ञानुभूति पूर्ण स्वर में बोली 'बिना बात के आप इतने व्यग्र और भावेण म आ जाते हैं। उसने अपने घाँवल से कुम्भा

वरसी के मुख पर उभरे श्वेद-कणों को पोछा । पत्नी के इतने अनुराग मद्दुल स्पश से कुम्भा को एक अलौकिक सन्तोष मिला । अपनी आन्तरिक विकलता को दीर्घ निश्वास द्वारा निकालकर व बोले, 'ठकुराणी सा । आप यह भली भाँति जानती हैं कि परसों के युद्ध में मेवाड़ बूंदी से पराजित हो गया है । बूंदी के निकट गाँव निम्बेड में दोनों सेनाओं के बीच घमासान युद्ध हुआ । सहस्र नूयवशी युद्ध पिपासुओं के समक्ष मुटठी भर हाडा सरदारों ने केशरिया पहनकर सामना किया । सभी कहते हैं कि विजय सत्य की होती है । असत्य पर लड़ा युद्ध उचित नहीं । हालांकि राणा लाखा जी के पास बूंदी से लड़ने का कोई ठोस आधार नहीं था, फिर भी उन्होंने अपनी विस्तारवादी नीति का पोषण करने के लिए हाडाराव वीरसिंह जी को एक पत्र लिखकर यह माँग की कि उन्हें चित्तौड़ की पराधीनता स्वीकार कर लनी चाहिए । उनका तर्क और माँग है कि उन्होंने जिन ग्रामों पर अधिकार किया है वे चित्तौड़ के हैं ।"

"क्या यह सच है ?" ठकुराणी ने प्रश्न किया ।

"नहीं । जो गाँव आज बूंदी का गौरव बढ़ा रहे हैं, उन्हें हाडा वीरों ने तलवार के जोर से मीणा से जीता है । उन्हें इस तरह की धौंस पर कसे दिया जा सकता है । मीणों से युद्ध करना कोई बच्चों का खेल नहीं । सो हाडा नरेश वीर सिंह ने उन ग्रामों को देने से सवथा अस्वीकार कर दिया । परिणाम स्वरूप राणा लाखा ने बूंदी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर ली । विजय सत्य की होती है । हाडाओं ने अपने मुटठी भर योद्धाओं के साथ राणा के छत्र छुटा दिये । स्वयं वीरसिंह ने राणा लाखा को युद्ध भूमि में ललकारा । सुनते हैं, विजयियों की भाँति चमकती दोनों की तलवारें टकरायी । किंतु हाडाओं के उस अप्रत्याशित आक्रमण को मेवाड़ी नहीं रोक सके । वे भाग पड़े हुए ।—इस लज्जाजनक पराजय और अपमान को राणा जी नहीं सह सके । उन्होंने चित्तौड़ पहुँचते-पहुँचते एक भयानक प्रतिज्ञा कर ली ।"

कुम्भा वरसी गात हो गये । उनके नेत्रों के स्फूर्तिग कुछ क्षणों के

लिए बुझ गये। उन्होंने पलकें मूढ़ लीं। ठकुराणी की उत्सुकता बढ़ती गयी। उसने चादी की भारी से सोन के गिलाम में पानी भरा। कुम्भा वरसी की विनीत स्वर में ठकुराणी ने कहा "ठाकुर सा ! जल धरोदिये।"

ठाकुर ने जल पिया। गिलाम को वापस लेते हुए ठकुराणी ने फिर पूछा "राणा जी ने कौन सी प्रतिज्ञा की है।"

'उन्होंने प्रतिज्ञा की है कि जय तब मैं बूढ़ी को नहीं ल लूंगा तब तक अन्न जल ग्रहण नहीं करूँगा।

ठकुराणा आश्चर्य-चकित सी कुम्भा वरसी की ओर देखने लगी। सहमती-सी बोली 'इतनी कठोर प्रतिज्ञा ?'

'हां ठकुराणी, इतनी कठोर प्रतिज्ञा की है हमारे राणा जी ने। ओर जानती हैं आप यह प्रतिज्ञा पूरा होने होत महीना लग जायेंगे और राणा जी भूख और प्यास से तड़प-तड़प कर अपना दम तोड़ देंगे।

'हं राम ! हठात ठकुराणी के मुख में यह शब्द उच्चारित हुए और वह गम्भीर हो गयी।

कुम्भा वरसी के समक्ष की दीवार पर एक ढाल के दाना ओर तल धारें लटक रही थीं। दायी ओर की दीवार पर कई सिंहो व भानुप्रो की सालें थीं। कुम्भा वरसी गिवार के बहुत ही शौकीन थे और सिंह को मारने में सिद्धहस्त गिने जाने थे। वे उठे एक सिंह को मुख पर हाथ रखकर वे बोले "यह प्रतिज्ञा हाडाराव व उनके स्वामिभान सरदार जीत जी सहजता व गीघ्रता से पूरी नहीं होने देंगे।—ठकुराणी सा ! हाडो ने स्थान-स्थान पर अपनी किलेबन्दी को बहुत ही सुव्यवस्थित और मजबूत बना लिया है। उनके मणस्वी व नीतिज्ञ सेनापतियो ने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है कि वे बूढ़ी आत लने की मोर्चे तो महीना जीत जायेंगे।

फिर राणा ?'

सूयवर्णियो की प्रतिज्ञा बच्चा का खेल बन गयी है। लेकिन ठकुराणी सा ! यह बच्चा का खेल उह बहुत महंगा पडेगा।

कुम्भा वरसी न फिर धीरे धीरे बताया, "ठकुराणी सा ! राणा जी ने अपनी पराजय को विजय में बदलने के लिए यह निश्चय किया है कि एक कृत्रिम बूंदी का निर्माण हो। चित्तौड़ के नीचे एक मिट्टी की बूंदी बन रही है। वैसे ही किला बन रहा है। राणा जी उस बूंदी को ध्वस्त करके अपनी प्रतिष्ठा पूरी करेंगे तथा उसकी रक्षा का भार हमें सौंपा जायेगा। और ठकुराणी सा, हमारी गंगो में हाडा वंश का गौरवशाली रक्त है, हम सिसोटिया राजपूतों का अपने समक्ष बूंदी का विनाश करते नहीं देख सकते चाहे वह बूंदी कृत्रिम ही क्यों न हो ?'

कुम्भा वरसी गत कई वर्षों से राणा जी की हाडा राजपूत सत्ता के सरदार थे। अपनी वीरता और शूरता के लिए वह दूर दूर तक प्रसिद्ध थे। किसी कारण हाडाओं से रूष्ट होकर वे राणा जी की सेवा में आए थे। किन्तु राणा जी की सेवा में आने के पूर्व उन्होंने स्पष्ट रूप से कह दिया था, जहाँ आपका पसीना बहेगा वहाँ हम अपना रक्त बहायेंगे। हम आपके एक सत्रेत्त पर अपना सवस्व विमर्जन कर देंगे, किन्तु हम कभी भी अपनी तलवार को हाडों के विरुद्ध नहीं उठायेंगे। हम कभी भी उन युद्धों में सम्मिलित नहीं होंगे जो हाडा वंश के उनकी मातृभूमि से सम्बन्धित होंगे। हम कभी भी अपनी आँखों के समक्ष किसी हाडा राजपूत का अपमान होने नहीं देखेंगे।

किन्तु आज जब कुम्भा वरसी गिकार करके लौटे तब उनके समक्ष एकान्त दीवान राणा लाखा का सत्तण पहुँचा। कुम्भा वरसी एक सिद्ध को मारकर लाये थे। बहुत ही थक चुके थे। बड़े जार की प्यास लगी हुई थी। उनकी इच्छा थी कि तन और मन की थकान मिटाने के लिए एक प्याली वसूम्बा की पी जाय।

अपने अश्व से उतरते ही हयोदीदार ने राणा जी का सन्देश पमा दिया। वे उसी पौंव पुन अशवाह्व होकर राणा जी के दरबार में पहुँच। बड़े-बड़े सामन्त, उमराव सरदार और दीवान जी बैठे थे। कुम्भा वरसी का सबने खड़े होकर अभिनन्दन किया। राणा जी से मुजरा करते वे

अपने पदानुसार प्रदत्त सिंहासन पर बठ गये ।

दीवाण जी ने एकलिंग की अभ्यपना करके कहा, "सरदारो ! राणा जी ने जो प्रतिज्ञा की है उसको सभी जानते ही हैं । प्रतिज्ञा इतनी बठोर है जिससे मेवाड भयानक परिणाम से टकरा सकता है । तात्पर्य स्पष्ट है कि जब तक बूदी का बिला विजयी नहीं होगा तब तक राणा जी अन्न जल ग्रहण नहीं करेंगे और यह सहज सम्भव नहीं है । अतः यह निश्चय किया गया है कि एक मिट्टी की बूंदी बनायी जाय और उसे सिमोन्गिया द्वारा विध्वंस कराया जाय । इस तरह प्रतिज्ञा पूर्ण करके किसी भी तरह वतमान सकट को टाला जाय । अतएव हम सबने देग और राणा जी के हित को सोचकर यह निश्चय किया है कि इस कृत्रिम बूंदी दूग की रक्षा का भार हाडा वीर कुम्भा वरसी को सौंपा जाय । सीसोदियो के आक्रमण पर वे हट जायेंगे और कृत्रिम बूंदी को विनष्ट कर दिया जायेगा । इस तरह यह सकट टल जायगा ।"

कुम्भा वरसी एकलिंग खड़े हो गये । उनका हाथ अपनी तलवार पर चला गया किन्तु दरबार की मर्यादा का ध्यान रखकर वे पुनः बैठ गये ।

सेनापति ने कुम्भा वरसी के रोद्र रूप को देखा । शक्ति हो उठा । फिर वह दीवाण जी को बठने का संकेत करके बोला "हम जानते हैं कि इस बात से कुम्भा जी के आत्माभिमान पर ठेस पड़ुधेगी पर राणा जी के जीवन और अपनी स्वामिभक्ति की रक्षा के लिए व इस प्रान्त का सह्य पालन करेंगे । उन्हें विश्वास होना चाहिए कि यह सब विवशता के कारण हो रहा है ।"

कुम्भा वरसी अधिक नहीं रके । वे दरबार में सिर झुका कर सड़ हुए और राणा जी के समक्ष बोले, "हम आपकी आज्ञा का पालन करेंगे ।"

अपने डेरे लौटते ही उन्होंने वसूम्बे की प्याली पी पर उनके मन की वाचलता और व्यग्रता बढ़ती गयी । सीसोन्गिया उनके गीय को ललकार रहे हैं । उन्होंने ना किया ' मैं बूंदी नहीं दूंगा कदापि नहीं दूंगा ।'

रात्रि का मौन अब उनके डेरे की दीवारों कपूरो व बुजों पर आकर

बैठ गया। रात उनकी आँखों में गुजरने लगी। उन्हें लगा कि यह रात कितनी विकृत और अधीर है? हर क्षण उमत्त और ठहरा हुआ! कुम्भा जी ने अपनी रानी से अनेक सुख और दुःख की बातें की। उनका पुत्र पालने में भूल रहा था। कुम्भा जी उसे स्नेह भरी विगलित दृष्टि से देखते रहे।

ठकुराणी न प्रायता की 'आप थोड़ी देर विश्राम कर लीजिए प्रभात होने ही आपको युद्ध भूमि में जाना है।

"ठकुराणी!" स्नेहिल स्वर में बोले कुम्भा जी, 'मुझे लगता है हमारे जीवन की यह सर्वश्रेष्ठ और महान रात है। अब दूसरी रात हमारे जीवन में नहीं आयेगी।

"नहीं नहीं, एस अशुभ अणूत मोल मन बोलिये। मेरा सि दूर मुहाग इतना फीका नहीं है।

कुम्भा वरसी धीरे से मुसकराये। बोले, 'राणी सा! क्षत्राणी का सि दूर केवल सि दूर नहीं होता वह रक्त सि दूर होता है। हर धीर-त्यागी क्षत्राणी ने अपनी अन्तिम माँग शोणित से भरी है। मैं निश्चित रूप से कह रहा हूँ कि मैं जीते जी बूढ़ी नहीं दूंगा। पांडा राजपूत यह अपमान नहीं सह सकेगा। और इस अपमान को रावन के लिए उसे उत्सर्ग होना ही पड़ेगा।'

कुम्भा जी शय्या पर अघशायिन हो गये। उनके कानों में पहने हुए मोती पम्पक रहे थे। ठकुराणी थोड़ी देर तक उन्हें देखती रही। बाद में चरणों को धीरे धीरे दबानी हुई बोली "मुझे तनिक भी दुःख नहीं है। क्षत्राणी के लिए श्रेष्ठ महान पथ ही उम दिन होता है जब उसका पति युद्ध को जाता है। किन्तु।'

'किन्तु क्या?'

'देलिए अपने कुवच को। बल घाप नहीं होगे और मुझे यह पूछेगा कि मेरे पिता जी कहाँ हैं तब मैं क्या उत्तर दूगी?'

"उसे मरी ढाल, तलवार और पगड़ी दिमावर कहिएगा, तुम्हारे पिता

जी न इस पगड़ी की रक्षा के लिए उन दो रास्त्रों से सज्जन होकर प्राण त्याग दिए ।

ठकुराणी मिसक पड़ी । अपने पति का निश्चित मृत्यु का जानकर उसका हृत्पथ विदीर्ण होन लगा । उसका ध्यान सहमा अपना हाथा की चूड़िया पर चला गया । वह उह देखती रही । उसकी भाँसों से श्श्रुमा की पविरल धारा प्रवाहिन होता रही ।

अपनी पत्नी को अपने वश म छिपात हुए कुम्भा जी न विगलित स्वर मे कहा मृत्यु वीरा क लिए त्यौहार होना है ठकुराणी सा । जो क्षण मृत्यु क लिए निश्चित है वह भायगा ही । हमे यह मानकर धैर्य रखना चाहिए कि कल विधि न हमारा मृत्यु त्विस निश्चित किया है लेकिन हमारी मृत्यु से आप विचरिन मत होएगा । यह फूल सा कुवर कल उडा होगा श्म भी यही स्मरण त्रिनामी रहियगा कि अपनी मातभूमि की रक्षा करना और अपने देग उसकी मिट्टी और उसकी आन गान की रक्षा करना । त्रिनी मूल्य और प्रमानन म अपने गौरव का मोन न करना ।

ठकुराणी मिसकता रही । कुम्भा जी उमे महलात रहे । कब रात अपनी तारो भरी चनडी समेटकर चली गयी यह उन दोना ने तभी जाना जब मन्त्रि की पवित्र घण घनियों ने उदगोधन की भवार की ।

×

^

×

कुम्भा वरमा न अपने आधान समस्त हाण सरदारो को एकत्रिन किया । उह सारा स्थिति से अवगत कराया । सारे हाहा सरदार इम तरह के अपमान क निरुद्ध लडने को तत्पर हो गय । उहनि उसी क्षण प्रतिगा की हम कुम्भा जी की भाँति जीत जी इस मिट्टी की धूदी को नहीं दग ।

कुम्भा जी ने कहा यह बात अभी प्रकट नहोनी चाहिए ।

डेरे के बाहर एक अश्व आकर रुका। अश्व राणा जी का था। उसने राणा जी का सन्देश लाकर दिया। सदा पढकर कुम्भा जी ने अपने लगभग पचास साथियों को चलने का आह्वान किया। हाडा वीर चल पड़े।

कुम्भा जी ने अपनी पत्नी स अन्तिम विदाई ली। वह पूजा का धाल सााकर लगी। आरती उतारी। अन्तिम बार अपने तेजस्वी और वीर पति के दशन किये। मन में कोई बोल उठा, 'कर ल जी भरकर दशन कर ले।' वह फिर रो पड़ी।

कुम्भा जी ने प्रस्थान किया। द्वार पर उनका पुत्र सडा मिन गया। वह तोतली बोली में बोना 'पिता जी आप कब लौटेंगे ?'

कुम्भा जी ने उसे अपने सीने में चिपका लिया। वे भर भर धाय। बाँदी ने आकर उसे अपनी गोद में ल लिया।

मिट्टी की बूंदी के चारा द्वार हाडा राजपूत रक्षा हेतु गडे हो गये। अश्व पर आरूढ होकर कुम्भा जी सीसोदिया के पास गये। उनसे गले से मिने और गजजर कहा 'हम बूंदी लडकर आपको दगे। बूंदी नाम की रक्षा करना हाडा का धम है, अत आप हम पर वास्तविक आक्रमण करें।'।

सीसोदिया में हलचल मच गयी। अस्वस्थ राणा जी न जब यह सुना तब वे रोप में भर धाये। उन्होंने आधा दी "हाडा को रोद लिया जाय।"

मिट्टी की बूंदी के दुग के द्वार पर कुम्भा वरसी अपने मांड को लिए पहरा दे रहा था। रणभेरी बजी। मारु ने नाद किया। हर हर महादेव और एवलिग दीवाण की जय के साथ सीसोदिया ने आक्रमण बाल दिया।

अन्द हानो ने सीसोदिया का बडी वागता से सामना किया। भयकर युद्ध के पश्चात मिट्टी की बूंदी को फतह कर लिया गया। कोई हाडा वीर जीवित नहीं बचा।

राणा जी ने कुम्भा बरसी को डूँडा । उसके रोम रोम मानो घाय हो गये थे । राणा जी ने उन्हें बाँहों में उठाया । अग्निम साँस लेते हुए भी कुम्भा जो कह रहे थे 'मै बूदी नहीं दूगा, कदापि नहीं दूगा ।' और राणा जी की बाँहा में ही कुम्भा बरसी ने दम तोड़ लिया ।

राणा जी ने व्यथित स्वर में कहा, 'हम आपके समक्ष नतमस्तक हैं । जिस धरती पर आप जैसे भावना वाले वीर होंगे, उस धरती को कोई भी पराजित व अपमानित नहीं कर सकता । दीवान जी, हाडा जी की शव-यात्रा राजकीय सम्मान के साथ निराली जाय ।'

राणा जी टूटे टूटे शव को रखकर चले । एक बार फिर मिट्टी की बूदी को देखा । वह उनके गौरव पर खिलखिला रही थी बिडबना से ।



प्रीत

पंशुमाली की रश्मियाँ कोहरे से सघप करने लगीं ।
 कोहरा—अटूट और अभेद्य कोहरा । शीत लहरों में बँधा
 और कोहरे की चादर में लिपटा आगरा शहर । मौन
 और नितान्त निश्चल ।

भयकर शीत से भयभीत यमुना का स्थिर और सोया
 हुमा जल । शांत और निस्पन्द ।

अपने शयनकक्ष में मयूराक्षी शय्या पर निद्रा में निमग्न
 हैं अप्रतिम योद्धा महान विलासी महाराजा गर्जसिंह राठोड ।
 जोधने (जोधपुर) के यशस्वी और अपराजेय राजाधिराज ।
 समीप ही रजत-दीवट पर इत्र से सुवासित दीपक जल रहा
 था । उसकी ज्योति म शय्या पर विद्ये मल्लमली जरीदार
 गद्दे चमक रहे थे । महाराज आलस्य में थे । चाकर कई बाइ

आकर उहे देव चुका था । प्रातः महाराज समय पर क्यों नहीं उठ रहे हैं ? वह सोच सोचकर उद्विग्न और चिन्तित हा रहा था ।

और महाराज ! महाराज जगकर भी जगना नहीं चाहत थे । अब भी रात्रि का सुमार उनकी बड़ी बड़ी भाँवा की पलकों को बोझिल बना रहा था और वे सपनीली मात्कता में अपने आपको विस्मृत किये हुए थे ।

गाहजहाँ के विशेष कृपापात्र नवाब फजल क घर का कल रात उन्हें घामत्रण मिला था । वे गये थे—घपना सम्पूर्ण पीगाक में । रेशमी जरीदार घबकन, श्वेत रेशमी चूडीदार पाजामा, कमरबन्ध जिसकी किनारी स्वर्णम जरी की थी । गल में अमूल्य हीरा का हार कानों में मुस्ता-लौंग । हाथों में सोने के कडे ।

व जस ही नवाब की महफिल में पहुँचे वसे ही नवाब ने उठकर उनका स्वागत किया । कुछ घण्टों भी उमराव सरदार और मनसबदार बैठे थे । सभी को शराब की मनवार की गयी । सुरा के साथ एक ईरानी नतकी ने नृत्य और स्वर लहरियों से समा बाँध लिया । भाँसों के जाम छलकने लगे नतकी के और न जाने कितने प्याले पी गये घामे हुए मेहमान । तब महफिल की गमा बुझी तब लोग बेहोश मदहोश से अपने अपने रथों पर आरूढ होकर चल पडे ।

नवाब ने गजसिंहजी से हलसन लेनी चाही । गजसिंह जी सुरा की मादकता में बहव रहे थे । वे उठे । सलाम किया और बिना ली, पर वे पुन वहीं बैठ गए । उन्हें तनिक भी होश नहीं था । नवाब वहीं गाव तकिये का सम्बल लेकर लुठक गया ।

महाराज गजसिंह के खास हाजरिए कृपालसिंह ने उह उठाया और सावधान करते हुए प्राथना की भन्नाता । होश में आइए हम अपने डेरे चलना है ।

'हम डेरे नहीं चल सकते । वह ईरानी नतकी कहाँ है ? हम उसे पनाम देंगे ।'

"अनदाता, वह चली गयी है। अन्न भी चलना चाहिए। रात बहुत जा चुकी है।

गर्जसिंह उठे। रोगिणी के वक्त में उनका कान्तिमय मुख और स्वर्णिम हो गया था। मानो गुलाब खिल उठा हो या फूल का किसी ने लाल रंग में भिगो दिया हो। वे हाजरिए के साथ चलने लगे।

चलने चलने रुके और परवाताप भरे स्वर में बोले 'जिमकी नतकी इतनी रूपवती होती है उसकी बेगम अनारा कितनी रूपवती होगी। बहुत चर्चा सुनी है उसकी। हम कोई उमका शदार करा दे तो हम उसे मालामाल कर दें।

यह वाक्य उस जगह से कहा गया था जहाँ में उनकी आवाज सहजता से जनाने झरोके तक जा सकती थी।

वे ईरानी नतकी की मधुर स्मृति में खाय रहें। अन्न में मन्दिर का जब पावक शम्भू बना तब महाराज हड़बड़ा कर उठे। जल्दी ही स्नानादि से निवृत्त होकर वे मन्दिर में अन्न-बन्दन करने चल गये।

आज व दरवार में हाजिर नहीं हो सकेंगे ऐसा उन्होंने भोजन से निवृत्त होते ही आलीजहाँ का कहला दिया और आप धूप लने के लिए अपने डेरे की ऊपरी मजिल पर आ गये।

धूप बहुत ही मुहावनी लग रही थी। बड़ी बड़ी धूलें इमीलिए बार-बार बंद हो जाती थी कि अब वे उस महफिल की ईरानी नतकी को बन करने की चपटा कर रही थी।

दास ने आकर सिर झुकाकर कहा "अनदाता। नवाब साहब की दासी आपसे मिलना चाहती है।

"नवाब साहब की दासी? अन्न दीजिए।"

बाद ही मिनटों में एक चालीस वर्षीया औरत महाराज के समक्ष हाजिर हुई। उसने तीन बार कोनिश की ओर चुपचाप खड़ी हो गयी।

"नवाब साहब का कोई परवाना लायी हो?" महाराज ने हुक्के की नली को मुँह में बाहर निकालकर पूछा। औरत का रंग गीरा था और

वह एकदम मुमनमानी बेस म थी । उमन पान खा रत्ता था ।

उसन फिर कानिग की ओर बोली, ' गुन्ताखी माफ हो, मैं तनहाई मैं कुछ भ्रज करना चाहती हूँ ।'

जो अगारक्षक खडा था, वह सिर भुजाकर चला गया ।

दासी ने अत्यन्त कीमन और नम्वरे स कहा ' लोंडी को जहीन, क नाम से पुकारते हैं । मैं एव खास भवमद स आपके हुजूर म पेग हुई है । जान की मुभाफी चाहूँगी ।'

' हम तुम्हें सात गुनाह माफ करते हैं ।

' हुजूर बल जब आपने ईरानी नतरी की तारीफ करते करते बगम का जिक्र किया तब मैं क्रोध में लड़ी थी । आपकी हुस्न का इस तरह आंगिक देखकर मरा दिन पमीज मदा और '

' और क्या ?' महाराज बेसत्री ने बोले ।

देविए गरीब परवर, घर का राज खोल रही हूँ । कुछ '

भरे, तुम बेफिक्र रहो । हम तुम्ह मुँह मंगा इनाम देंगे । तुम्हारी झोली सच्चे मोतियो से भर देंगे ।'

' बात यह है, अन्नदाता । दासी घुटना के बल बठकर बहुत ही घीम गंगे म बोली हमारी सबसे छोटी बेगम माहिबा मनारा और नवाब साहब मे नही बनती है । बेगम साहिबा के नाखून की भी बराबरी वह रक्कासा नही कर सकती । आप चाह तो ।'

वासना मे लिप्त और अत्यन्त विलासा किंतु महान योद्धा के समस्त दारीर मे एक भुरभुरी-सी छूट गयी । उनकी इच्छा हुई कि वे अपनी हपेलिया को इस समाचार के मिलने की प्रगनता में रगड दें, तैकिन उहनि बेसत्री पर बाबू किया । गम्भीरता से आवाग की ओर दखरर बोले ' जहीन ! इस बात को मत भूलो कि तुम एक ऐसे इनसान के सामने लड़ी हो जो तुम्ह जिदा जमीन मे गडवा सकता है, जो मुगलिया सल्तनन की नींव हिला सकता है । उससे किसी तरह का खेल खेलने की कोशिश मत करना ।'

दासी काँपने लगी । उसने हाथ जोड़ दिये । उससे कुछ भी बोला नहीं गया । घर घर धूजती रही ।

'जानती हो उस वक्त हम नरो मे थे ।' महाराज ने पुन ककश कठोर आवाज मे कहा "हमारी कमजोरी का नाजायज फायदा ।"

'तोबा करती हूँ, गरीब परवर । हम गरीब गुलाम ऐसा सोच भी नहीं सकते । कुछ लालच

"हम तुम्हें खूब इनाम देंगे । सहसा महाराज ने स्वर बदलकर कहा, "पहले हम बेगम का दीदार कराओ ।'

"जल्द करा दूगी । तब आपको मरा यकीन आयगा कि हमारी मालकिन हकीकत मे हुस्न और शर्म की मानिका हैं ।"

महाराज ने दासी को एक झँगूठी उसी वक्त दे दी ।

×

×

×

बादशाह के दरबार मे गर्जसिंहजी का बहुत ही मान-भ्रम्मान था । शाहजहाँ उन्हें 'मामू' कहकर पुकारते थे । उनकी इज्जत और आनवान का विशेष ख्याल रखते थे । मन ही मन बादशाह गर्जसिंह जी की रसवाई से डरते भी थे ।

फिर दामी की वे सदा प्रतीणा करते थे और नवाब साहब स उहनि खूब दोस्ती गाठ ली थी । कभी उनके यहाँ जाना और कभी अपने यहाँ बुलाना ।

और एक दिन वह दासी आयी । बहुत खुश जसे चाँद उसके चेहरे पर था टिका हो । भाबर महाराज से एकान्त मे बोली, "आज दोपहर, बेगम साहिबा आपका दीदार करना चाहती हैं ।"

' मगर कहाँ ?'

' जमना के तय एकर एहें ली गायर मे । एहें नै गायर मे ।

वेगम साहिवा ने इल्लिजा की है कि बात को भ्राम-यास के पेड़ भी न सुनें ।”

गजसिंहजी ने अपनी अपार आंतरिक प्रसन्नता पर अधिकार करते हुए कहा “उन्हें हमारी ओर से पूरा यकीन दिला देना ।”

और गजसिंहजी अपने विश्वस्त अग्ररक्षकों के साथ यमुना के उस पार पहुँच गये । बिलचिलाती घूप रात भर के ठिठुराये पेड़ों को पूर्ण राहत दे रही थी । जल-बीचियाँ धीरे धीरे तट को स्पृश कर रही थीं मानो वे तट को स्नान करा रही हों ।

गजसिंहजी ने एक घने भ्रुरमुट में अपने सभी विश्वस्त अग्ररक्षकों को सावधान किया, ‘हालाँकि इसमें किसी भी पडयत्र की गंध नहीं आती है, फिर भी तुम लोगों को नितांत सजग प्रहरी की भाँति सख्ता होना पड़ेगा । सच्चा और स्वामिभक्त सनिक वही होता है जो स्वामी के सकेत पर एक क्षण भी असावधानी न करते ।’ और उन्होंने अपनी विनोद दासी देवली को एकांत में आने का सकेत किया । वह जब एकांत में आ गई तब उन्होंने उससे आदेश भरे स्वर में कहा ‘तुम वेगम की नाव के पास चला जाना । अत्यंत चतुराई से इस बात का पता लगाना कि उसके साथ कोई सदिग्ध व्यक्ति तो नहीं है ।’

‘जो हुक्म, अन्नदाता । आप निश्चित रहिए ।’ देवली सिर झुका कर चला गई ।

घूप से स्नान करत हुए जल में एक नाव मथर गति से आ रही थी । नाव पर सिर्फ दो मत्लाह थे । नाव भी कोई बहुत बड़ी नहीं थी । एव-दम साधारण ।

गजसिंहजी सजग हो गए । एक बड़े वक्ष के तने की ओट में सखे होकर वे आती हुई नाव को अपलक दखने लगे । देखते देखते वह नाव किनार से आ लगी ।

उसमें स जहीन उतरी । जहीन के साथ बुरखे में एक अय नारी थी । नारी के दो गोरे-गोरे हाथ उस वाले बुरखे में दिखाई पड़ रहे थे ।

जहीन ने इधर उधर देखा । तभी दल्ही उसके पास हवा की तरह आयी । जहीन की आँखा में प्रश्न नाच उठा । देवली से उमका मीठा, प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं था । देवली ने मुस्करा कर कहा "मैं गजासिंहजी की खास बाँदी हूँ । आइए, मेरे साथ चलिये ।"

वेगम ने बीणा के तारा के भक्त हान जैसे स्वर में कहा, "नहीं जहीन, हम इन्हे नहीं जानते ।"

देवली और कुछ कहे, इससे पहले ही महाराज स्वयं वचन की ओट से निकल आए । उन्होंने अनुशासक स्वर में कहा, 'जहीन, हम यहाँ हैं ।'

जहीन ने एक बार इधर उधर देखा । फिर वह एक घने झुग्घुट में वेगम साहिब का लेकर घुस गई । यह झुग्घुट सचमुच का आभार स्थल था । चारों ओर घनी भाड़ियाँ और भाड़ियों के और गहरा करन के लिए उन पर बल्ले लिपट गई थी । बेला में छोट छोटे लाल, पीले और सफेद गंधहीन फूल खिले हुए थे ।

जहीन ने आदाब बनाकर कहा, 'महाराज, मेरा इनाम ?' महाराज ने तुरत अपने गले के एकलव्य हार को खोलकर उसे दे दिया और बचन दिया कि वे उसे नवाब साहब से माँगकर ले जायेंगे ।

जहाँ चली गई । प्रस्तर प्रतिमा की तरह खड़ी रही आद्वितीय सुन्दरी और कीमती अनारा वेगम ।

महाराज उसके समीप गये । मधुर स्वर में बाल "इस परदे को दूर कीजिए वेगम साहिब । हम नहीं जानते कि यह प्यार किस किस का है पर इतना जरूर जानते हैं कि हम आप से मिलन के लिए तड़प रहे थे रात दिन बेचनी में सँसे ल रहे थे । शायद इसलिए प्रेम करने वालों के बारे में लोग न कहा है कि वे जन्म जन्मांतर से प्रेम करते आते हैं ।"

महाराज भावावेश में थे । क्या कह रहे थे, यह स्वयं उन्हें मालूम नहीं था ।

रोककर, निस्तब्ध ।

महाराज उसके समीप गये । अपने हाथ से बुरके को उलटा किया । हठात महाराज के मुँह से आश्चर्य म डूबी ओह !' निकल गयी, जस काली, बाजल-सी घटाआ के बीच चाँद नही मूरज । तेजस्वी सूरज ।

महाराज अप्रभित से खडे रहे । पयरापी दष्टि से, देखते रहे अपने स्वप्ना की रानी अनारा वेगम को और अनारा की नाजुक सी पलकें पल भर के लिए खुलकर झुक गई । उसके लरजने होठो पर आनव गन्ध धरधराकर रह गया । हाथ थोडा सा उठा तो उठा ही रह गया ।

'वेगम ! जहीन सच कहती थी कि हमारी वेगम साहिबा चाँद का टुकडा हैं । वह आपके बारे मे इम तरह बताती थी, मानो वह नही, आप खुद हमसे बातचीत कर रही हो । इस पहली मुलाक़ात मे हम कुछ नही कहते सिफ इतना ही वायदा करते हैं हम आपके लिए सब कुछ निछा कर कर सकते हैं ।

अनारा वेगम ने अपनी पखुडियो सी पलका को धीरे धीरे खोला । बहुत ही मद्धिम स्वर मे बोली आपके बारे मे मैं बहुत सुन चुकी हूँ । हम भी सफा नही छोटेगे । आप यकीन रखें ।'

महाराज का विपुल विलास मे लिपटा मन दहक उठा । उन्होंने आगे बढ़कर वेगम के हाथ धाम लिए और उह चूमकर कहा 'विदा ।'
वेगम ने सिफ मौन सलाम किया ।

×

×

×

फिर त्तिन प्रतिनि उनका प्यार बन्ना गया । महाराज अपना मारा शीय कीटुम्बिक परम्परा गौरव मान-भर्यांग और आनवान को विस्मन करके अनारा की आगोण मे खो गए और अनारा वेगम ने भी किराी

की परवा न करके गर्जसिंहजी को अपना सबस्व समर्पित कर दिया ।

वे हमेशा मिलने लगे । खुलेआम मिलने लगे । उनके चरचे भी शुरू ए । मुमलमान सरदारों को यह अनुचित लगा । उन्होंने नवाब से इसकी शिकायत की । पहले तो नवाब को विश्वास नहीं आया, पर बाद में सारी स्थिति का ज्ञान हुआ, तो वे सजग हो गए । उन्होंने तुरन्त अनारा पर प्रतिबंध लगा दिया । भय अनारा कही जा या नहीं सकती थी । द्यूदी भी सख्त पहरा ठिठा दिया गया था—इतना सख्त की कोई भी बिना बजह बाहर नहीं जा सकता था ।

लेकिन जहीन ने देवली को अपने यहाँ बुलाया । बेगम ने दृढ़ भरे स्वर में कहा, "मैं महाराज के पास जाऊँगी । मैं उनके बिना नहीं रह सकती देवली ! उन्हें मेरी ओर से हाथ जोड़कर कहना कि वे मुझे माजाद करा दें ।"

देवली ने बेगम को आश्चर्य करने हुए विनम्र शब्दों में उत्तर दिया, "महाराज स्वयं तटस्थ रहे हैं । उन्होंने कहा है कि वह मुझे एक बार मिले, सिर्फ एक बार । क्या आप उनसे मिल नहीं सकती ?"

"किस मिल सकती हूँ, देवली ! नवाब खुद बादशाह सलामत के खास आदमी हैं । मुझे डर इस बात का है कि कहीं मेरी बजह से कोई बड़ा खून-खराबा न हो जाय ।"

"मैं इसका क्या जवाब दूँ ? आप किसी भी तरह उनसे मिल लीजिये ।"

कुछ दिनों तक मनाया छाया रहा । बेगम साबती रही । सहसा चहरे पर प्रसन्नता की रेखा नाची । वह बोली "महाराज पश्चिमी महल के भरोसे में आ सकते हैं क्या ? उन्हें कहना कि मैं वहाँ उनका इन्तजार करूँगी ।"

देवली ने आकर महाराज से सारी बातें बतायीं । महाराज ओर विरल हो उठे । उन्हें लगा कि बेगम के बिना यह जीवन, यह भोग-विलास यह शोभ और यह शानोशीवत, सब व्यर्थ है ।

‘मैं जाऊंगा देवली, तू बेगम को जहर कह दे कि वह झरोखे से रस्सी की सीड़ियाँ बनाकर ढाल दे। मैं उसके द्वारा झरोखे में पहुँच जाऊँगा।’

देवली खली गई।

×

×

×

दिसीय का समय। महाराज अपने व्यक्तित्व की महता को भूलकर साधारण नायक की तरह चल पड़े। वे हाथी पर थे। जैसे ही हाथी झरोखे के नीचे पहुँचा वैसे ही बेगम ने रस्सी की सीड़ियाँ लटवा दीं। महाराज पलक भपकते चढ़ गये।

वह अनारा का अपना बक्ष था। अनारा महाराज से लिपटकर सिसक पड़ी। महाराज भी बिह बल हो गए।

‘बेगम!’

महाराज! आप कुछ भी कहिये पर यह सच है कि हम मुद्रात की राह में बहुत आगे उड़ चुके हैं। यहाँ से लौटकर मैं जिन्दा नहीं रह सकूंगी। पना नहीं आप क्या सोचते हैं?

महाराज ने उसके नाजुक हाथ को अपने हाथ में लेकर कहा ‘बेगम! मैं बहुत ही ऐग्याग रहा हूँ। लेकिन तुमसे प्यार होने के बाद मेरा दिल बल्ल गया है मैं भी स्वयं बदल गया हूँ। मुझे लगता है कि वह गर्जिह जो मोरत को खेल और रूप की वस्तु समझता था, मर गया है। तुम्हारे प्रेम की छाया में एक नये गर्जिह ने जन्म लिया है। मैं भी तुम्हारे बिना जीवित नहीं रह सकता।’

प्रकाश धीमा था। बेगम उनके पास गयी। रघे स्वर में बोली, कुछ कीजिए मुझमें अब अलगव नहीं सहा जाता। मैं बच तक मुग्धवत का भूटी बातों से नवाब को भरमाय रखूंगी। शराब के जाम पिलाये रखूंगी। सच, मैं आपके इस्क के साथे में दम लेना और दम तोड़ना

चाहती हूँ। मैं नवाब के साथ हरगिज नहीं रह सकती।”

गर्जसिंहजी बाहर फले ढंधरे को देखते रहे। बेगम की बिडकी के चौखटे पर सिर रखकर लम्बी साँसें ले रही थी। गर्जसिंहजी ने गम्भीर स्वर में कहा, “अपने भगवान की सौगंध खाकर कहता हूँ कि मैं तुम्हारे लिए सप्ताह की सारा खुर्गियाँ छोड़ सकता हूँ। मारवाड का सिंहासन और मुगलिया सल्तनत का मान-सम्मान छोड़ सकता हूँ। बेगम मैं तुम्हें बचन देता हूँ कि प्राण रहते तुम्हें नहीं छोड़ूँगा। मैं राजपूताना का वीर हूँ। क्षत्रिय हूँ, क्षत्रियो में राठीड हूँ। हम अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिए सिर कटने के बाद भी धराशायी नहीं होते। और आपको अपनी तलवार पर हाथ रखकर भरोसा देता हूँ कि आपका वही घोहदा होगा जो हमारे महली में पटरानी का होता है।”

“फिर आप मुझे अपने यहाँ ले चलिए।”

“मैं आपको इसी समय ले चल सकता हूँ।”

“फिर ले चलिए।”

और रात के ढंधरे में दोनों जने झरोखे से उतरकर चले गए। सामोश रात और उन दोनों के सामोश इरादे। किसी को कुछ पता न जाता, सिर्फ जहान जानती थी कि बेगम वहाँ है।

दूसरे दिन सारे नगर में तूफान मच गया। आगरा के हर प्रतिष्ठित व्यक्ति के यहाँ इसी चर्चा का बाजार गरम था। लोग पता नहीं लगा पा रहे थे कि आखिर बेगम गयी कहीं? हाँ, यह निर्विवाद रूप से कहा जा रहा था कि बेगम की उम्र नवाब साहब से बहुत कम थी।

और नवाब साहब जो स्वयं शाहजहाँ के वृषापान्न थे, जहाँपनाह के बेटे हुए थे।

“क्या बात है नवाब साहब?”

नवाब साहब ने सारी बातें दब भर स्वर में सुना दी। शाहजहाँ ने अनुमान लगाया। बल ही उनका प्रमुख गुप्तचर ने बताया था कि गर्जसिंहजी का अनारा बेगम से उन्होंने गम्भीर स्वर में नवाब से कहा, “आप

फिर न करें, हमारी और से पूरी कोशिश की जायेगी।”

शाहजहाँ ने तुरन्त गर्जसिंहजी को तलब किया। गर्जसिंहजी भी तुरन्त हाजिर हुए। औपचारिकताएँ पूरी करते ही बादशाह ने तनिक आदेश-भरे स्वर में कहा, “अनारा बेगम कहाँ है?” बादशाह की नज़रें दीवार पर बने एक तलचित्र पर थी।

‘मुझे नहीं मालूम आलीजाह? और आपने मुझसे ऐसा सवाल किया ही क्यों? मैं मुगलिया सल्तनत की देखभाल करता हूँ, उसके मन सबदारों ताजमी सरदारों की बीवियों की नहीं।’ गर्जसिंहजी का स्वर कठोर हो गया।

शाहजहाँ ने प्रश्न भरी दृष्टि उन पर फेंकी। ईरानी कालीन पर थोड़ी चहल-चदमी करके कहा, “मुगलिया सल्तनत पर आपके बहुत मह सान हैं। यह भी सही है कि आपने अपनी बहादुरी और जवामरदी से हमारे सख्तेताऊस की कई बार हिफाजत की है लेकिन हम यह भी जानते हैं कि औरत आपकी कमजोरी है। ऐसे हालात में आप हमारे किसी खरबवाह को नाराज करके हमारे बीच भगडा भी करा सकते हैं। जरा हमारी बात पर गौर कीजिए कि इससे हिंदू और मुसलमानों में फसाद हो सकता है।”

गर्जसिंहजी की भ्रुकुटियाँ तन गयीं। कुछ रुष्ट होते हुए बोले, ‘एक अदना मनसबदार महाराज गर्जसिंहजी पर बे-जुनियाद दोष लगयेगा आलमपनाह? राठौड़ का रक्त इतना ठण्डा नहीं हुआ कि मुगल जब चाहें उन्हें तलवार दें। यदि मुझ पर झूठा दोष लगाने का साहस किया गया तो नवाब को बहुत बुरे अजाम से टकराना पड़ेगा।’

अब शाहजहाँ ने अपना रस बदला। वे समझ गये कि महाराज इस तरह की डाँट डपट और घमकी में नहीं आ सकते। तुरन्त मधुर स्वर में बोले, “आप मेरी बात का मतलब नहीं समझे आप मुझ पर यकीन क्यों नहीं करते? मुझमें भी आपका खून है। मैं आपकी तहेदिल से मासूम हूँ। आप मुझे अपना समझकर सब कुछ सच-सच बयान कीजिए।

मैं आपसे एक सहशाह ही नहीं, जाती तौर पर भज कर रहा हूँ कि मामू, मैं आपके हक में ही फसला करूँगा।"

"वायदा करते हैं।"

"वायदा करता हूँ, मामू। शाहजहाँ ने विनीत स्वर में कहा, "मैं नहीं चाहता कि ऐसी मामूली बातें खीफनाक अन्जाम में बदल जायें।"

गजसिंहजी ने सारी बातें बताकर कहा 'बगम हमारे पास है। हम उमम अन्नग नहीं रह सकते। हम उसके लिए सब कुछ छोड़ने के लिए तयार हैं। आपकी नज़रे इनायत और ओहदा भी। यह भी सच है कि हम उसके लिए दुनिया का बड़ी से बड़ी ताकत से टकरा सकते हैं।'

"हममें भी ?"

"गुस्तासी भाफ हो, बन्न आया तो मुगल सल्तनत से भी।' गजसिंहजी की आँखें भुक्त गयीं।

बादशाह ने घात बल्लते हुए कहा, 'और आपको राठोड बस में उसका क्या ओहदा रहेगा ?'

"हम उसे वही इज्जत देंगे जो अपनी महारानी को दे रहे हैं। जहाँ पनाह, हम उसे बहुत प्यार करते हैं। हम उसके साथ पूरी वफा और सच्चाई से रहेंगे।"

शाहजहाँ ने कहा, हम आपसे गर तौर पर बेगम बरसते हैं। आप उसे जोधपुर भेज दीजिए। पीछे से आप चले जाएँ, लेकिन बहुत ही खुफिया तौर पर। हम नवाब को दक्षिण में भेज देंगे। खुश हैं आप ?"

"हम आपसे इस महसान को कभी नहीं भूल सकेंगे। महाराजा ने सिर झुका दिया था।

और महाराजा गजसिंह ने अनारा बेगम का अपनी भीत तक एक हिल्क रानी से कम इज्जत से नहीं रखा। आज भी जोधपुर में उस प्रेम-दीवानी की याद में अनारा की बावड़ी बनी हुई है।



एक और नूरजहाँ

रसकपूर की निजी बठक में उसकी हसी गुजित हो
 गयी। पति गिबनारायण मिथ उसकी इस हसी का मम
 नहीं समझ सके। वह अप्रतिभ सा रसकपूर को दबने रह
 गये। रसकपूर अपनी रंगी गुलाबी ओपनी को जरा मिर
 की ओर झुका कर बोली 'पडितजी आपने मुझे बहुत
 साड-व्यार दिया है। मैंने अपने जीवन में किसी को य
 अपने सिर पर सच्च व्यार का हाथ रखते हुए पाया है, तो
 आपको। मैं आपको यकीन दिलाती हूँ कि जयपुर के दीवान
 आप ही होंगे।

संभ वार्तालाप में वही सरककर पवत घाटियों में छि
 गयी थी।

बांगी ने आकर इत्र का दीपक जला दिया था जिससे
 बेटक में सुवासित आसोड़ फल गया। समीर मंद मंद चल

रहा था। काँचली लौ म मिश्र का चेहरा और गम्भीर लग रहा था। रसकपूर के काँचल के एक पल्लू को स्नेह से चूमन हुए उसने कहा, "बेटी, मुझे तुम्हारा ही भरोसा है। सारे साम त, सरदार और उमराव तुम्हारे विरुद्ध पड़्यत्र रच रहे हैं। व तुम्हें शीघ्र से शीघ्र जलील करके अपने अपमान का बदला लेना चाहते हैं।"

रसकपूर न घणा स एक हुंकार भरी और कहा, "महाराजा जगत्सिंह मेरी मुटठी म हैं। पडितजी, व मर बिना जिंदा नहीं रह सकत। व मुझे बहुत प्यार करते है। फिर मैंने अपने विरोधियों को या तो पञ्च्युत करा दिया है या मरवा दिया है।"

बडारन नरवदा न उसकी बठक म प्रवेश किया। बडारन ने काली छोट का घाघरा और काँचली पहन रखी थी। सिर पर भाना ओढ़ना ओढ़ रखा था। उसके गले म चाँदी का काठलिया और साँवल थी। कमर मे चाँगी का बन्दोडा भूल रहा था। उसने रसकपूर का सिर मुका-कर मुजरा किया। विनीत स्वर म बोली "अन्नदाना न आपका मद परमाया है।"

"मैं अभी हाजिर हाती हूँ।" रसकपूर ने नरवदा म कहा और उठता हुई पडितजी से बोली, "आप निश्चित रहिए। आप जयपुर के दीवान बनेंगे ही।"

पडितजी ने उसे आशीर्वाद दिया और प्रसन्नता मे हूवी हुई वह बली गयी।

माँक और गहरी ह्री गयी था।

महन के मदिरा की शगध्वनि और घण्ट बज उठे। रसकपूर ने अपनी बाँधियों स स्नानादि का प्रबन्ध करने क लिए कहा।

जब वह नहाकर बाहर निकली तब उमका अद्वितीय सौंदर्य वण-वण में व्याप्त हो गया। उन बाँधियाँ वस्त्र पहनाने लगी। रोगी भीने वस्त्र। उसका गोरा रंग, बनरिया लहंगा, काँचला और छोठने म एक मन हा रहा था। काना म हारक वण फून और गले म श्रीरक गजशर।

भलमल भनमल ।

पाँवों में वह बजती हुई पायल जरूर पहनती थी । वह सज घजकर महाराजा के गयनरक्ष में पहुँची ।

जयपुर के महाबिलासी और चरित्रहीन राजा जगतसिंह रसकपूर के लिए उमत्त हो गये थे । रसकपूर एक वेश्या, एक मुसलमान बर्या, जिसने जयपुर के राजघराने में तूफान मचा दिया था । राजा जगतसिंह कौटुम्बिक गौरव की प्रतीक अपनी समस्त रानियाँ जोधी, जसी और भ्रियाणी को छोड़कर उसका वासनालिप्त प्यार में तमय हो गये थे । सभी सामंत सरदारों ने इसका घोर विरोध किया । 'यह वेश्या उनके घम को पददलित करके छोड़ेगी ।' इस तरह की चचाएँ फलने लगी थीं पर रसकपूर ने किसी की परवाह नहीं की । वह अपनी मनमानी करती थी, क्योंकि स्वयं महाराजा उसके हाथ की कठपुतली थे । उसने एक तरह से शासन की बागडोर अपने हाथ में ले ली थी ।

पायल की भ्रकार जैसे ही जगतसिंहजी के कण-कुहरा में पड़ी वैसे ही उहाने अपनी बाँदी से कहा 'लगता है रसकपूर आ रही है । इत्र का छिड़काव कर दो और दीपक जलाओ । मुझे और कसूम्बा पिलाओ ।'

कसूम्ब में मतवाले बने जगतसिंहजी से रसकपूर कहती 'मुझे सगा डर लगता है राजाजी वही आप अपने दुष्ट सरदारों की बातों में आकर मुझे देग निकाला न दे दें ? आपका वह बनिया दीवान आज ही एक आदमी का ऐसा कह रहा था । मुझे उसकी वफादारी पर शक है । उसे अपने पं से हटा दिया जाय ।'

तब रसकपूर की बाँह महाराजा के गले चारों ओर लिपटने लगी । वह अपने मिर की महाराजा की छाती पर रख देती । महाराजा के चारों ओर वासना का सागर ठाठें मारने लगते । महाराजा कहते, 'हम उस दीवान को पत्र ही पदच्युत कर देंगे । हम तुम्हारे एक पगारे पर सारे राज्य का शासन बदल सकते हैं ।'

और दूसरे दिन पंडित दीवान ही गया । सारे बछवाह राजपूत जल

उठ। इस वेदथा ने महाराज पर न जाने क्या जादू कर दिया है ? वे किसी का भी नहीं सुनते। क्या किया जाय, रसकपूर का पतन बन्दे हो ?

पर रसकपूर ने धीरे चतुराई से कदम उठाना शुरू किया। उसने कुछ विश्वस्मय लोगो व बाँधियों का गुधनचरी करने के लिए छाड़ दिया। मायता का वह भीतर ही भीतर कमजोर बनने लगी। उह आपस में भिन्नने लगी। श्रीवान मिश्र उस अत्यन्त ही बनवान बना रहा था। वह कूनातिन और दुष्ट प्रकृति का व्यक्ति अपनी पत्नी की रक्षा के लिए रसकपूर के चारों ओर साँप की तरह लिपटा रहता था।

सूय तप रहा था। जयपुर कपाल पत्नी-मा लग रहा था—प्रिलकून साक और सूना। उदास दापहर सत्र जगह सायो पना थी।

रसकपूर अपने भवन में बठी थी। दो बाँधियों पक्षे भल रही थीं। दीवान समीप बैठा गम्भीर चर्चा कर रहा था। दीवान फरमा रहा था, 'ठाकुर चार्त्तिसिंह तुम्हारा खूलमखुल्ला विराध कर रहा है। उसने पछे बह बह सामनों का हाथ है। मुझ सतरा लग रहा है।

'आपको सतरा हर वकन सगता ही रहता है पडितजी ! पर रसकपूर ने कच्ची गाँवियाँ नहीं सली हैं। मैं राजाजी से अपने नाम का पिन्ना चनात की आगा ल ती है। मैंने उनम वचन भी ने लिखा है कि मरा सम्मान जोषाणी, जैसाणी और भन्धियाणा रातियो का तरह हा। मेरा सतवा उनके बराबर हो। दरबार म मरा वही सम्मान हो जा एक रानी का होता है।

"फिर उन्हांन क्या कहा ?"

'उहने फरमाया कि तुम्हारा नहीं सम्मान और बहा इज्जत हागी। रसकपूर के इसारे पर सारा शासन बाला जर मकता है। राजाजी मरे लिए आपना सब्ब्य त्याग सकत हैं।'

'मरे बारे म कोई चचा हुई ?' धीरे से प्ररन किया श्रीवान ने।

'हुई व आपस बहुत खून धीरे सन्तुष्ट हैं।'

"फिर कउन दरबार म मिलेंग।"

रसकपूर दीवान के जान के बाद दण म अपने-आपको निहारत रही, फिर दम्भ म हस पड़ी। उनने अपने चारों ओर देखा, अनुल वम विपरा पडा है। जयपुर के राजपूती गौरव को उस नतकी ने मानो पत दलित कर दिमा हो।

×

×

×

दरवार।

महाराजा जगतसिंह ने दरवार म प्रवण किया। रसकपूर उतके साम थी। रूप की ज्योतिर शिला की भांति उसका सौन्द्य ज्वाजल्यमान हे रहा था। कुछ सरदार जल रहे थे। कितना अनुपम! कितना अलौकिक!

स्वत ही साम त सरदार गरदन भुकाकर मुजरा कर रहे थे। कि दूना के सामत चान्मिह ने अपनी गरदन नहीं भुकायी। वह तनक मडा रहा।

महाराजा के पाँव कालीन स चिपक गये। दरवार का सारी दीवा जैसे काप उठी। महाराज क्रोध म जल उठे। अपने हाठ को अजाब तर से हिलाकर व बोने 'ठाकुर सा! दरवार के काण-कापदे भी नहा रसे जाने? हम मुजरा कीजिए।'

'मैं आपका मुजरा कर सक्ता हूँ पर इस कथा का नहीं। जिसके इज्जत और मान हाट की वस्तु है उसके समक्ष राजपूत का गिर नहा भुक् सक्ता।

ठाकुर सा! चील पडे महाराज। उनकी आँखें बहुत ही भयावह हो गयी। मूछें क्रोध म फुरकने लगी। उनसे तलाण एक शब्द भी बोल नहीं गया।

सारे दरवारी स्तब्ध हो गये। दीवान मिश्र अपनी तलवार पर हाथ रखकर खड़ा था। मक्की मनय होने की आका हो गयी। महाराज

अत्यंत कठिनता से बोल पाय इस गुस्ताखी की सजा जानन हो ? हम आपको बोलू म पिमवा देंगे ।

ठाकुर के काना म चमकत हीरे के लींग हिल उठे । अपने कानों को स्पश करती मूछो पर ताव देकर व बोनी और आप कर ही क्या सकते हैं ? हिंदुआ का विनाग या तो उसकी धार्मिक श्रधता न किया या भोग-बिलास न । कछवाहा का खन आज आज एक बश्या के लिए इस तरह तडपेगा, यह हमन सपन म भी नहीं सोचा था । मैं इम रटी को न आज मुजरा कर न कल । और जिस आयाजन म यह भाग लगी, उसम मैं बंदम नहीं रखूमा ।

रसकपूर अब भी तटस्थ सी खना थी । अपनी जलती आँवा स यह चाँमिह को देख रही थी और समझ रही थी अब मामता को भी । वह सबके चहारा को पढ़ रही थी कि सारे नामन महाराजा व विरुद्ध हैं । विरोध की आँवा म घणा की आग बनकर चमन रहा है । रहा कुछ अधिक बन हो गयी तो मलाराज की हत्या तक हो सकती है । इसलिए उसने स चलना शयस्कर समझा । उसन नाराजगी के स्वर में कहा, "मैं ली हूँ, राजाजी । मैं आपकी यह बदज्जती नहीं देख सकती ।"

रसकपूर हना की तरह चली गयी । महाराजा उस रोचना चाहने थे, र उनका जबान ताबू स चिपक गयी ।

दरवार म सन्नाटा छा गया ।

चाँमिह न थकते हुए पुन कहा ' कछवाहा की पवित्र और गौरव गयी बसुंधरा पर एक बश्या का सिक्का चलगा । क्या सब रानियाँ मर गयी है, अनदाता ! वासना म इतने लिप्त मन होइए । कछवाहो व भान गान को कर्तित मत कीजिए । उनकी मर्यादा का धूल धूसरित ।"

महाराजा ने अपने भीतर का सारा जोर लगाकर कहा, ' तामोश ! हम कहते हैं कि आप चुप हो जाइए बरना हम आपको दरवार में कत्ल करा देंग ।"

चाँदसिंह दरबार से निकल गया ।

बानावरण बहुत बोझिन हो गया था । दरबार बर्खास्त कर दिया गया ।

×

×

×

राजाजी की सवारी निकली थी ।

हाथी के हौदे के स्वर्ण सिंहासन पर महाराजा के साथ रसकपूर बंठ थी । लोग जय जयकार कर रहे थे । दीवान मिश्र सारे सामंतों की देखभाल कर रहा था । चाँदसिंह भी नहीं आया था । वह चाँदसिंह पर क्रोधित हो रहा था और साथ ही उसने विशद पडपत्र भी रच रहा था ।

रसकपूर के गुरगें अपने दोनों हाथों से वे ही सिक्के लुटा रहे थे जो महाराजा ने रसकपूर के नाम से चलवाये थे । ब्राह्मण दीवान ने अपने आदमियों को सिखा पड़ा था कि वे महाराजा के ज्यघोष के साथ महारानी रसकपूर की भी जय बोलें । उनकी जयकार के साथ राजपूतों को लगना था कि किसी ने उनके जिस्म पर जलती गलावा चिपका दी हो पर अभी खामोश । जलूम गहर में धूमक महन में पहुँचा । महल के बाहर महाराजा के निजी भवन में । रसकपूर उनके साथ थी ।

एकान्त होने ही रसकपूर अपनी रोगी बाह महाराजा के गल में डाल कर बोली "यह इज्जत आप ही मुझे द सकने हैं । राजाजी, आपने हम नाचीज को कितना आदर बनाया है । अब आपसे एक ही अज है कि मुझ सदा अपने घरणों में पड़े रहने दीजिएगा । यही इज्जत यही मान यही अधिकार ही मेरे ।"

"हम तुम्हें बचन देने हैं कि तुम्हें इतना ही मान मिलेगा ।

फिर वही वासना का समन्तर । भाग की दुबलता । जगतसिंहजी क्षण क्षण में विचलित हो गते टूटने लगते दान हो जाने और रसकपूर

मांगती, 'फला बादी को हटा दिया जाय । फला सामत के अधिकार छीन लिये जायें । फला को फला पद का अधिकारी बना दिया जाय । मुझे इतना खपया चाहिए । और महाराजा हाँ हाँ करते रहते और घत में झुकलाकर कहते, 'मेरा सभी कुछ तुम्हारा है । यह धन, महल और शासन ।'

और आज उसने दीवान को उसी समय बुलाकर आज्ञा दी, ठाकुर चाँदसिंहजी न राजाजी का अपमान और दरबार की मर्यादा तोड़ी है, इसलिए उन पर दो लाख खपया जुरमाना किया जाता है । जुरमाने की प्रदायगी अगर न हो तो उनकी जागीर जन्म हो जाय ।

रसकपूर ने इस फरमान पर महाराजा के उसी पल हस्ताक्षर कराए । मोहर भी लगवायी और दीवान को दे दिया ।

चाँदसिंह सभी सामनों के पास गया । सामत क्रोधित हो उठे । पर दीवाण मिथ ने बहुत ही अच्छी नाकेबन्दी कर रखी थी । चाँदसिंह परेशान रहने लगा ।

×

×

×

बडारन नरबदा राज्य की वफादार बाँदी थी । वर्षों से नमकहलाली का हक भ्रष्ट करती आयी थी । जोधाणी रानी के साथ वह दहेज में आयी 'गोली' थी । पर गीध ही अपनी चतुराई और वफादारी के बल पर रावले की बडारन बन गयी । वह इन सब तमाशों को देख रही थी । जोधाणी का अपमान, उपेक्षा और उसकी पीडा । रानी पति वियोग में कभी बावली-सी हो जाती थी । नरबदा को कहती थी, इस रसकपूर की हत्या कर दो ।

नरबदा जानती थी अपने पद की मर्यादा जिम्मेदारी और उलमन । वह राणी-सा को कहती 'आप धीरज रखिए । कभी वह खेल खेलूगी कि पासा ही पलट जायगा ।'

श्रीर एक दिन उसने सड़क पर एक सेठ की बेटी को देखा । देखा तो देखती रह गयी । रसकपूर से भी अधिक रूपवती । उसने तुरन्त उसका धना-धना लिया फिर कुटनियों को छोड़ा । वह महाराजा के चरित्र की दुबलता को तो समझी हुई ही थी ।

रसकपूर के पानन का एक ही इलाज है—एक दूमरी रसकपूर ।

मौका मिलते ही उसने उस लड़की को महाराजा के समक्ष पेश किया । राजा चकित रह गये । तबिा वे रसकपूर को अपने मन की इस कमजोरी और उस लड़की की जानकारी से धनभिन्न रह रहे थे । नरबदा कहती, “रसकपूर कभी भी उसकी हत्या करा सकती है, धनदाता । वह बहुत ही निदयी है । और यह दीवानजी इन सारे सामन्तो को अधिक खिलाफ करके आपको शक्तिहीन बनाना चाहते हैं । ठाकुर चाँदसिंह विद्रोह करने पर उतारू हैं ।

श्रीर इसी तरह नरबदा महाराजा को उकसाती रही । एक दिन जब महाराजा ने उस लड़की के बारे में पूछा ‘ वह हमारे पास क्यों नहीं आती नरबदा ? हम उसे और उसके बाप को निहाल कर देंगे । हम तुम्हें मुँहमांगा इनाम देंगे । तुम देर मत करो ।

‘ पर यह रसकपूर धनदाता वह मुझे जिंदा जला डालेगी ।’

“रसकपूर को मालूम ही नहीं पड़ेगा ।”

‘ ऐसा आप मत सोचिए धनदाता । उसके अपने लोग भी महल में बहुत हैं । आप उसे अपने रास्ते से हटा क्यों नहीं देते ?”

यह सम्भव नहीं । हम उसे चाहते हैं प्यार करते हैं । हमने उसको कई वचन दिए हैं नरबदा ! इस मामले में बीच रसकपूर को मत सामो । कोई और उपाय ढूँढो ।

श्रीर सारे सामन्तो तथा रानियों की दृष्टियाँ नरबदा पर लगी हुई थी । बस अब नरबदा कोई नया धमाका करे ।

नरबदा ने उस लड़की के बाप को एक ऊँचा घोहदा दिला दिया । उस दिन महाराजा ने फिर उस लड़की को देखा । वे वाचाल हो गये ।

नरबदा को एका न म ले जाकर बोले, "मैं तुम्हें मुँहमांगा इनाम दूंगा ।
नरबदा, मेरी इस इच्छा

'भाप इस रसकपूर बाईजी को ।'

फिर तुम इसको बीच में लाती हो ।" महाराजा रुष्ट हो गये ।
कठोर हो गए ।

'भन्नदाता कसूर माफी हो । भाप जिस रसकपूर पर इतना भ्रमि
मान कर रहे हैं, वह भापके प्रति वफादार नहीं है । भाप त्रिया-धरिष्र
को नहीं जानते ।"

"क्या बकती हो ?" महाराजा उत्तेजना में खड़े हो गये ।

ठीक कहती हूँ । वह भापके साथ-साथ किसी और को भन्नदाता
बहु कुलटा है ।'

"नरबदा हम तुम्हारी जवान खीच लेंगे ।"

"हाथ कगन को धारसी क्या ? आज दोपहर को मेरे साथ भाप
बनिए ।"

×

×

×

दोपहर ।

नरबदा महाराजा को अपने साथ रसकपूर के निजी कक्ष में ले
गयी । रसकपूर के साथ कोई खूबसूरत जवान सीया हुआ था । महाराजा
ने तलवार निकाली । नरबदा ने उसे रोक लिया । भ्रज करने लगी,
"इसकी यह सजा नहीं है, भन्नदाता । इस वेश्या को कठोर से कठोर
दण्ड मिलना चाहिए । इसकी वजह से सारे जयपुर में अशांति और
विद्रोह के बीज पड़े हैं ।"

महाराजा उद्विग्न से वापस आये ।

नरबदा ने रसकपूर के समीप सोये युवक को सी मोहरें दी

वस्तुतः वह रसकपूर की एक विद्वत्सनीय बादी थी जो घोंघी देर के लिए पुरुष बनी थी, रपयो के लालच में। नरवदा ने उसे यह भी धमकी दी 'यदि तूने कभी राजपाश किया, तो अनदाता सबसे पहले तुझे ही सूली पर चढ़ा देंगे, समझी।'

×

×

×

'दावानजी को पद से अलग कर लिया गया है।' रसकपूर की एक दासी ने धबराते हुये कहा।

'क्यों?' रसकपूर चौकी।

'पता नहीं, बाईजी, अभी-अभी मुझे यह खबर लगी है। वह अब भी आकुल-व्याकुल थी।

ऐसा नहीं हो सकता राजाजी ऐसा नहीं कर सकते। मैं उनके पास जाती हूँ। कहती हूँ क्या इमीनिए मुझे इतने बचन लिये थे। प्यार किया था। क्या इसी वृत्त पर मैं शासन बदल सकती हूँ? नहीं, मैं राजा जी को ऐसा नहीं करने दूंगी। जरूर किसी ने तुझे झूठी खबर दी है।

वह जब ही कमरे से बाहर निकली कि उस मिपाहिया ने बाहर निकलने से मना कर लिया, आप इस कमरे से बाहर नहीं जा सकतीं। यह महाराजा की आज्ञा है।

क्या बचने हो? वह चिल्ला पड़ी।

हम सही परमा रहे हैं बाईजी।'

रसकपूर लडप उठी। यह सब यकामक और इतना जल्दी क्या हो रहा है? वह भाकर गम्या पर पड गयी। क्रोध में वह तक्तियों को पीने लगी। अपना सिर मम्ममनी गद्दे पर पटकने लगी।

सेनापति घूँसलह त्रिने कभी रसकपूर ने महाराजा से कहकर नीजरी से निकलवा लिया था, अपने हाथ में हथकड़ी लेकर आया। रसकपूर के

कमरे में निधडकता से घुसता हुआ बोना, मैं आपको गिरफ्तार करने आया हूँ। आपको सुनकर बड़ा दुख होगा कि आपकी सारी सम्पत्ति को जब्त करने के आदेश भी दिये जा चुके हैं।”

“तुम ! क्या तुम्हारा माया फिर गया है ?”

“वह जमाना चला गया जब आपके पत्थर तैरते थे । महारानी सा, आपको बद करने के हुक्म मिल चुके हैं।”

‘मैं राजाजी से मिलना चाहती हूँ।’

‘आप उनसे नहीं मिल सकती। आपको नाहरगढ़ के किन में ले जाया जायगा।’

नहीं नहीं, ऐसा न करिए । मुझे एक बार राजाजी से मिलने दीजिए, सेनापतिजी । मुझ पर दया कीजिए । मैं आपकी गाय हूँ ।” वह रो पड़ी ।

घूर्डसिंह ने उसकी कोई बात नहीं सुनी । उसके हाथों में जबरदस्ती हथकड़ी डाल दी । उसे अपने साथ ले चला ।

मौनियों उतरते ही खिडकी पर महाराजा खड़े हुए दीख गए । रस-कपूर ऋद्धन कर उठी, “राजाजी यह सब क्या है ? मुझे मेरा कसूर तो बनाइए । राजाजी राजाजी, मैं आपकी गाय हूँ । ये सब लोग मुझे नाहरगढ़ ले जा रहे हैं।”

घूर्डसिंह ने उस घबका दिया । वह दीवार से जा टकरायी । महाराजा ने एक पल के लिए भ्रातृ बंद कर ली । फिर घृणा से सखारकर धूक लिया । रसकपूर का आतनाद बढ़ गया, ‘मुझे बचाइए, राजाजी मुझे बचाइए किसी ने आपको कपट से ठग लिया है, भनदाता महाराज ”

रसकपूर पीली पड़ गयी ।

उस तुरन्त पैन्ल ही पवत पर स्थित नाहरगढ़ के उस भयानक किले में ले जाया गया जिसके तहखाने महाभयगाधियों के लिए गुरगित रहते थे ।

उसके वीमल पाँवों से खून बह रहा था । चेहरा जब हा गया था ।

हॉठ सूख गये थे ।

राजपुर रोते रोते धक गयी थी । बोधी ही देर पहने जो इस घरती की साध्यासी थी जिसके कुत्रम के बिना पत्ता तक नहीं टिकता था वह हयकडियो मे जकडी बिलस रही थी, उसके रुदन पर लोग हँस रहे थे ।

जब उसे नाहरगढ के मयानक भघेरे तहलाने के फाटकी के समन खडा किया गया तब वह भय से चीख पडी, नहीं ! नहीं ! मुझे इसमें मत डालो मैं आपके हाथ जोडती हूँ । मैं यहाँ से दूर बहुत दूर चली जाऊँगी । /

ठाकुर चौदसिह ने जलते स्वर में कहा पातुर ! तूने जयपुर को दु लो मे डाल दिया है । यहा बीरों की जगह भडवे भर गये हैं । तुमने सोचा कि महाराजा सत्ता तुम्हारे भपने रहेंगे । तुम समझती थीं कि तुमसे सुन्दर इस पृथ्वी पर दूसरी नारी नहीं होगी । क्या तुमने महाराजा के के कारनामे नहीं दख कि इन्होंने लडकियों के पीछे जिस चाहा शासन सम्हाल लिया और जिसे चाहा वापस धक्का देकर निकाल दिया । तुम्हारा भी वक्त था गया । सेनापतिजी हयकडी खोलकर इसे तहखान म डान दो । इतने बहुत से बेगुनाहों को मरवाया है अब इसे च्नी तहखानो में लडक-लडक कर भूखो-प्यासी मरने दो ताकि यह जाने कि मौत किसनी मयानक व पीडाजनक होती है ।

नहीं नहीं नहीं । मुझ कोई बचाओ बचाओ ।
 धाराज तहखानो के बल होने पाटकी के साथ मर गयी ।
 एक घोर नूरजहाँ का पतन हो गया ।



चौहान और पठान

“महाराज !”

“क्या है ?”

“दिल्ली से आया एक घुडसवार आपकी सेवा में इसी समय उपस्थित होगा चाहना है।”

“दिल्ली से आया घुडसवार !” रणमभीर गढ़ के शीय, शक्ति और धय की साक्षात मूर्ति महाराज हम्मीर चौहान चौंक पड़े। वह अभी सिंहासन पर बैठे हुए थे। उनके पास उनके सेनापति, दीवान व दूसरे सरदार बैठे थे। उन्होंने पल भर के लिए उनकी तरफ देखा, फिर आने वाले पहरेदार की आकृति पर अपने भाग की तरह चमकते लाल साल नेत्र जमाते हुए पूछा, “वह सवार कौन है ?”

“अपने आपको एक बदनसीब सिपाही बता रहा है।”

'उत्ते घादर के साथ भीतर ले आओ ।

जो पहरेदार धाया या वह पुन सलाम करके चला गया । सेनापति दीवान और हम्मीर की भङ्कुटियाँ तन गयीं, उनकी भाङ्कृतियाँ और भी गभीर हो गई ।

सेनापति ने अपनी कमर में लटकती तलवार की ओर देख कर कहा, 'महाराज खिलजी की तप्या दिन प्रति दिन बढ़ रही है । वह सारे राज-पूताने को निर्दयता और निममता से रौंदना चाहता है ।'

हम्मीर ने अपनी मूछों को ऐँठते हुए कहा, अभी तक चौहानों तलवारों से नहीं टकराया है जिनके तप तेज, और गौष के सामने कोई घातलायी नहीं ठहर पाया ।"

तभी सिपाही उनके नामने उपस्थित हुआ । सिपाही लगभग ४० वर्ष का था । उसका गरीर बलिष्ठ और कद काफी लंबा था । उसने तिर भुंकाकर प्रणाम किया और भक्त्यत आदरसूचक शब्दों में कहा "साहसाई मजहब और ईमान में अनेने में कुछ अज करना चाहता हूँ ।'

हम्मीर ने हाथ ऊंचा करके संकेत किया । सेनापति, दीवान और दूसरे लोग उठ कर चले गए ।

कहिए, क्या कहना चाहत है ?" हम्मीर ने कहा ।

मैं आपकी गलन में आया हूँ । मेरे जानमाल की रक्षा कीजिए । मैं आपकी कदमबोधी करता हूँ ।' कह कर आगतुज ने हम्मीर के चरण पकड़ लिए ।

हम्मीर सिंहासन से उठ गए । दीवार पर टगी ढाल व तलवार की ओर देखकर उन्होंने गमीर स्वर में कहा 'मैं आपका मतलब नहीं समझा अरा अपनी बात को साफ कीजिए फिर वह खों कर बोने, 'अरे, आप सडे क्यों ?' ? विराजिए न ? इस आसन पर तगरीफ रल्लिए ।'

आगतुज ने टूटे हुए स्वर में बताया, 'मैं पठान जाति का एक बन्दादर सिपाही हूँ । मेरा नाम महिमगाह है । मैंने खिलजी की सिदमत बहुत ही बरा के साथ की । उसने मेरी बराओं का बन्दा जफ़ाओं से

दिया। मुझे और मरे सारे बुनबे को उसने दीन बना दिया। दर दर का भिखारी और दाने दाने का मुहताज बना दिया। मुझे किसी ने शरण नहीं दी। क्योंकि खिनजी का यह परवाना मेरे पीछे-पीछे रहता है कि इसे जो पनाह देगा वह मेरा दुश्मन ममका जायगा। लाचार मैं अपने बाल-बच्चों वीवी व बूढ़ी मा को लेकर भूखा प्यासा इस बंजर दुनियाँ में जगह जगह भटक रहा हूँ। अगर वफादारी का यही इनाम है तो धाड़े ही दिनों में वफादारी का नाम इस जमीन से उठ जाएगा। मैंने अपनी पूरी ताकत से खिलजी की शोहरत फलाने के लिए कुरबानियाँ दी और उसने मुझे सिर्फ इसलिए अपना जानी दुश्मन समझ लिया कि एक बात पर मैं उससे राजमद नहीं हुआ। चौहान राव, मैं आपके कदमों पर सिर झुका कर पनाह माँगता हूँ। सुना है राजपूत कौम शरण में घाए दुश्मन को भी गले लगा लेती है।'

महिमशाह की आँखें भर आईं। वह उठा और उसने अपनी आँखें पोंछी। अपने गने को साफ करता हुआ नजरें झुकाए हुए बोला मैं जाति का पठान हूँ। मरे खून में एक सच्चे और वफादार पठान का खून है मैं खुदा की कसम खा कर कहता हूँ कि आप स कभी भी दगा नहीं करोगा। मुझे पनाह दीजिए गरीब परवर, पनाह दीजिए।'

हम्मीर पल भर सोचता रहा। उन दिनों अलाऊद्दीन की शक्ति और शीघ्रता का घातक चारों ओर फैला हुआ था। अत्यन्त ही बजर ढग से वह राजस्थान के गौय को कुचलने के लिए तुला हुआ था। राजपूताने के वीर भी उस घातकारी और बिना कारण साधारण प्रजा को अपनी धारुमणकारी गतिविधियों से पान्ति करने वाले क प्रति रोष में भरे हुए थे। एक तरह से वे खिलजी की शूरता को समाप्त करने में सलग्न थे लेकिन वे स्वयं एक सूत्र में नहीं बंधे थे। उनमें सगठन नहीं था, इस लिए खिलजी का अत्याचार दिन प्रति दिन बढ़ रहा था। हम्मीर को भी खिलजी की शक्ति और सेना का शान था। फिर भी महिमशाह के रुदन रुदन और बिचसता न उन्हें सचमुच भक्भोर दिया। उन्होंने

खान, हम पनाह दी है तो आप हमारी हिजाजत भी करें। सिफ हम ही नहीं, दुनियाँ के सारे पठान आपके इस रहम के अहसानमन्त होंगे।

हम्मीर ने खिलजी को जवाब में कहला दिया 'हम अपने शरणागत को किसी कीमत पर आपके हवाले नहीं कर सकने।'

और इस उत्तर से खिलजी भाग बचूला हो गया। उसने तुरन्त एक और हरकारा भेजा, जिमके द्वारा खबर दी 'इसका अजाम बहुत ही खौफनाक होगा। हम रणधभौर की ईंट से ईंट बजा देंगे।'

उत्तर में हम्मीर ने कहलवाया, "हम चौहान हैं। हम कोई काम अजाम के अच्छे बुरे कारण से नहीं करते। हमने सदा शरणागतों की रक्षा की है और आज भी उसकी रक्षा जी जान से करेंगे। आप को जो कुछ करना है वह कर लीजिए।"

इस उत्तर के साथ ही हम्मीर युद्ध की तैयारियाँ करने लगा। खिलजी भी अपनी विशाल सेना के साथ रणधभौर की तरफ बढ़ा। रास्ते में घमासान युद्ध हुआ। खिलजी के पाँव उम्बड़ गए। कुछ दिन के लिए युद्ध में विराम आ गया। फिर दिल्लीपति की सेनाओं ने सम्पूर्ण शक्ति से हम्मीर पर आक्रमण किया। हम्मीर ने भी पूरी शक्ति से सामना किया। पर इस बार वह खिलजी को नहीं रोक सका और अन्त में खिलजी ने रणधभौर के किले को घेर लिया।

रणधभौर का किला अभेद्य और अटूट था। हम्मीर के इस किले को भेजना और विजय करना कठिन ही नहीं असम्भव-सा था। खिलजी बार बार आक्रमण करता और बार बार मुह की खाता। महिमशाह का शीय भी देखते बनना था।

दिन पर दिन गुजरते गए महीन साल भ बदल गए हठी और घानापी गिन्नी रणधभौर को लेन के लिए तड़पता रहा, लेकिन वह

महिमशाह को आराम से बैठन का सकेत किया । फिर स्वयं बाहर भाप । अपने दीवान और सेनापति के सामने महिमशाह की समस्या रखी ।

सेनापति, दीवान और राव हम्मीर बहुत देर तक वार्तालाप करते रहे । अंत में सबसम्मति से यह निर्णय लिया गया ' महिमशाह की दारण दे दी जाय । यह सच है कि इसका परिणाम अत्यंत भयकर होगा, लेकिन यह पठान हमारी उदारता प्रेम और उत्साह हृदयगम करके आने वाली पीढी के लिए एक इतिहास तो छोड़ जाएगा कि एक पठान के लिए एक पूरी रियासत ने, राजपूताना के वीर चौहानों ने अपना सबस्व निछावर कर दिया ।

हम्मीर ने आकर महिमशाह से कुछ कहना चाहा । महिमशाह उदास था । उसका मुख पीला पड़ गया था । उसने हम्मीर राव से बेचनी से पूछा, "महाराज ।

हम आपको पनाह देंगे । हमारी शरण में आपकी पूर्ण सुरक्षा रहेगी ।

महाराज ! वह हम्मीर के आलिगन में बघ गया और बोला ' मैं पठान का बेटा हूँ । आपके लिए सब कुछ कुरबान कर दूंगा । मेरी जान खली जाएगी लेकिन आपकी शान की बट्टा मैं अपने दूंगा ।

हम्मीर ने उसे अपने आलिगन से अलग करके कहा, ' अब आप आराम से हमारे महल में रहिए । आज से आप हमारे दारणागत ही नहीं भाई श्री हैं ।

तीन दिन बातचीत चलते आनाऊद्दीन खिलजी का दूत सदाग लेकर आ गया । मंत्रों में कहा गया था कि आप महिमशाह को पनाह न दें । उसे हमारे हवान कर दें और उसी दिन महिमशाह की बीबी ने ने राव चौहान से मुनाकान करके परदे में पीछे से प्रायना की कि भाई-

खान, हम पनाह दी है तो आप हमारी हिजाजत भी करें। सिर्फ हम ही नहीं, दुनियाँ के सारे पठान आपके इस रहम के अहसानमद होंगे।

हम्मार ने खिलजी को जवाब में कहना दिया "हम अपने गणनागत को किसी कीमत पर आपके हवाल नहीं कर सकन।

और इस उत्तर से खिलजी आग बबूला हो गया। उसने तुरन्त एक और हरकारा भेजा, जिसके द्वारा खबर दी 'इसका अजाम बहुत ही खोपनाक होगा। हम रणधमौर की ईंट से ईंट बजा देंगे।'

उत्तर में हम्मीर ने कहलवाया 'हम चौहान हैं। हम कोई काम अजाम के अच्छे-बुरे कारण से नहीं करते। हमन सत्ता शरणागता की रक्षा की है और आज भी उसकी रक्षा जो जान से करेंगे। आप का जो कुछ करना है वह कर लीजिए।'

इस उत्तर के साथ ही हम्मीर युद्ध की तैयारियाँ करने लगा। खिलजी भी अपनी विनाल सना के साथ रणधमौर की तरफ बढ़ा। रास्ते में घमासान युद्ध हुआ। खिलजी के पाँव उखड़ गए। कुछ दिन के लिए युद्ध में विराम आ गया। फिर दिल्लीपति की सनाभा ने सम्पूर्ण शक्ति से हम्मीर पर आक्रमण किया। हम्मीर ने भी पूरी शक्ति से सामना किया। पर इस बार वह खिलजी को नहीं रोक सका, और अन्त में खिलजी न रणधमौर के किल को घेर लिया।

रणधमौर का किला अभेद्य और अटूट था। हम्मीर के इस किले को भेदना और विजय करना कठिन ही नहीं असम्भव-सा था। खिलजी बार-बार आक्रमण करता और बार-बार मुह की खाता। महिम्गाह का गीय भी देखते बनना था।

दिन पर दिन गुजरते गए महीने मान में बदल गए, हठी और अमानतायी खिलजी रणधमौर को लेने के लिए तड़पता रहा, लेकिन

सपन नहीं हो गया, उसने एक बार फिर हम्मौर से कहाया कि आप हमें महिमगाह को सौंर दें हम अपनी फौजें वापस कर लगे लेकिन हम्मौर ने इस प्रस्ताव को एवदम ठुकरा लिया। हालांकि रणथंभौर के विनाग की कल्पना करके स्वयं महिमगाह ने कहा था 'आप एक पठान के लिए अपने इन इन्सान क्यों मरवाने है? अब मैं आपसे हाथ जोड़कर कहता हूँ कि आप मुझ विलजी के हवाले कर दीजिए।'

हम्मौर ने उसे साने स लगाकर कहा दोस्त इतिहास सदा रहेगा कि एक बाग्गाह एक पठान के सून का प्यासा था और एक चोहान राव उसकी रक्षा के लिए सून बहाने को तयार था।'

विलजी न फिर आक्रमण किया और बहुत जोरदार आक्रमण किया। लेकिन यह आक्रमण भी दूसरे आक्रमणों की भांति असफल रहा।

और अन्त में विलजा हताग सा हो गया। करे तो क्या करे?

तभी उसके सिपद्मालार ने उसके सामने एक ऐसी आदमी को पेश किया जो गिन का गुप्त भाग जानता था। सदा दगादोहियो ने ही देग को सवाह किया है और गीय को कलकित। विलजी ने उस आदमी को (निमका नाम लेखक दगादोही रस रहा है) रणथंभौर का शासक बनाने का प्रलोभन दिया। दगादोही जो एक मामूली सिपाही था शासक बन जान के सपने में पागत हा गया। उसी एक रात किले की सुरग का पना बजा दिया। विलजी का सेना युद्ध के नियमों और मर्णागों का उल्लंघन करती हुई गड़ में प्रवेश कर गई।

चोहानों की एक टुकड़ा न विलजी की विनाल सेना को गाजर मूली का तरह बाग्ना गुरु कर लिया। मारी विलजी सेना में बाहि बाहि सब गई। एक बार हम्मौर और दूसरी बार महिमगाह पठान दोनों इतनी प्रबलता और कुशलता से लड़ रहे थे कि विलजी के सनित बाह कर भी उन विनाग पर कब्जा नहा कर सन जा रण की दृष्टि में महत्वपूर्ण थे। सान दीन गई।

विलजी की सेना भाग नहीं बढ़ सकी तब उगन अयन निर्यता से

अपनी सेना को अथाधु ध मोत के मुह में भानना शुरू कर दिया । उसने सनिक कीठ मकाठी की तरह मरत रहे पर तीसर दिन युद्ध की स्थिति बदल गई । हुम्मीर का धग धग जस्मी हा गया था । महिमशाह की भी एक हाथ की दो अगुलियां कट गई थीं ।

दोपहर का मूय चमक रहा था । आकाश बहुत ही निमल था । बिलजी की सेना जिन में घुस गई थी । किल के हर एक काने में मयकर युद्ध हो रहा था । बच्चा बच्चा अपनी मातभूमि के लिए लड़ रहा था । स्त्रियां घायल सनिका का उपचार करके उन्हें पुन युद्ध के लिए प्रेरित कर रही थी । वे देख रही थी कि किमी भी वीर की पीठ में कोई घाव नहीं है । वे उत्साह से भर जाती थी । जब स उनका मन्तव ऊँचा हो जाता था ।

बिलजी के चुने हुए योद्धा इस लड़ाई में मारे गए ।

राव हुम्मीर अन्न में शत्रुओं से घिर गए । वे अकेले थे और शत्रु के सिपाही पचास । वे भी बिलजा के चुने हुए योद्धा ।

हुम्मीर की तलवार त्रिजली की तरह चल रहा थी । उसके सनिकों की संख्या बग़र कम होनी जा रही थी । अचानक हुम्मीर का एक हाथ कट गया । उस हाथ में हुम्मीर का खडग था । अब हुम्मीर निहत्था हो गया था । निहत्था हुम्मीर भूखे बाघ की तरह झपटा और उसने एक शत्रु की तलवार छान ली । एक हाथ से लड्डुलुहान हुम्मीर शत्रुओं का विनाश करने लगा । इधर महिमशाह की वारता की वीरता से ही उगमा दी जा सकती थी । वह बफादार पठान जान हथेली पर लिय लड़ रहा था । कितना उत्तम शौर्य और कितना महान उत्सव ।

अन्न में वह धण आया जिस धण की हर महान त्यागी वीर को प्रतीका रहनी है युद्ध करने-करत वार गति को प्राप्त करना । हुम्मीर वीर गति को प्राप्त हो गये । महिमशाह गिरफ्तार हुआ गया ।

रणधमोर का किला बिलजी के हाथ लगा, पर चित्तौड़ की तरह ही—एकदम उजाड़ और वीरान ।

तिसजी ने देगा कि मुक्ति से पाँच-सात सत्रह ही जीवित पकड़े गए हैं। तिसजी और बच्चे न जाने किस अनजान रास्ते से बाहर चले गए, यह वह नहीं जान सका। किले की गली-गली घोर ईट ईट धून से रगी थी। धातवी की चीलपुकार युद्ध की भयानकता और तानागहों की बबरता की कहानी सुना रही थी। कहीं-कहीं भाग क्षमसान भूमि की तरह जल रही थी। कितना कष्टनामय बीमरस दृश्य था। मानो युद्ध से तिसस वण-वण कराह रहा था।

तिसजी यह सब देखकर एक बार काँप उठा और न जाने क्यों एक उन्मादपूर्ण घण्टहास करने लगा कि सब आश्चर्य से उसे देखते रहे। सब को शका हुई कि क्या जहाँपनाह पागल हो गये हैं ?

दूमरे तिन सुबह ।

तिसजी के सम्मुख अचराधी के रूप में महिमगाह को पेश किया गया। पास ही अभिमान में अकड़ा देसगोही खडा-खडा मूँछों पर ताव ले रहा था। महिमगाह ने उसके पास आते ही खतर कर उमने मुँह पर धूरा और कहा 'हरामी कुत्ते तुमसे तो जानवर ही अच्छा ।'

देसगोही सवपका गया ।

तिसजी ने हयान्डियों में बंध महिमगाह से कहा 'पठान तुम्हारा अन्तिम समय नज़दीक आ गया है। तुम्हारी आखिरी स्वाहित्त क्या है ? हम तुम्हारी आखिरी स्वाहित्त पूरी करना चाहते हैं ।'

मेरी आखिरी स्वाहित्त यही है कि मुझे षोडी देर के लिए छोड़ दिया जाए ।'

क्यों ? तुम आजाद होकर क्या करना चाहते हो ?

मैं तुम्हें और उस गद्दार को मौत के घाट उतारना चाहता हूँ ।'

हम तुम्हें भाक कर मरने दें अगर तुम अब भी हमारी गुलामी बखूत

कर लो ।'

"यू है तुम पर, अगर मुझे जिन्दगी रहते कोई भी मौका मिलेगा, मैं तुम्हारी बोटी बोटी काट दूँगा । अरिद जमाना इस पठान पर किए गए एक चौहान का एहसान नहीं भूँगा । पठान का बच्चा बच्चा हमेशा इस कुरबानी को याद रखेगा । और याद रखेगा तुम्हारी जगलूरी आदतो को ।

'सामोश' खिलजा चीन पडा, 'इसे सजाए मौत दे दी जाए ।'

लेकिन महिमशाह ने अपनी मौत के पहले एक और मजूर देखा कि देशद्रोही का घाघा जमीन से गाड़ दिया गया है । गारदन के बाद उस पर गिकारी कुत्त छोड़ दिए गए हैं ।

और वह 'मरा इनाम, मेरा यह इनाम' बिलना रहा है और खिलजी बहनी हँसी हसते हुये बह रहा है जो अपने मालिक का नहीं हो सका वह हमारा क्या होगा ? गद्दार की इतनी ही दर्दिली मौत होना चाहिए ।'

और महिमशाह को गद न तलवार के नीचे घाने के लिये गध से सन गई ।

{इस कहानी का सर्वाधिकार सख्ता' मासिक के पास है}



सुक्ति

दूर से घून के बान्त उमडने हुए दिखाई पडे । प्रताप
सूय रश्मियाँ उन बादलों को और स्पष्ट कर रही थी ।
देखने देखते विने की ओर एक साइनी (ऊँटनी) घाती हुई
निचाई पडी । साइनी पर एक सवार था जो क्षत्रिय सनिक
लगता था । देखने मे वह अत्यन्त बलिष्ठ और सूस्वार लग
रहा था ।

वह बीकानेर नरेश राव दलपतसिंह के दुर में
हाजिर हुआ । दलपतसिंह जी अपनी राठीडी मूछों पर ताव
देने हुए बोले 'क्या बात है, रूपाराम ? तुम दिल्ली से
कब आये ?

सम्भा अनन्ता ! देशद्रोही आपका भाई सूरसिंह
बागहाट जहाँगीर की मन्त से बीकानेर पर आक्रमण करने
आ रहा है । उसके सग जावनाला पचास हजार फौज
के साथ है ।

दलपतसिंहजी तुरन्त गम्भीर हो गये। अपने गले में पहने उज्ज्वल मुक्ताम्रा के हार को क्रोध से तोड़ते हुए वे बोले, 'हम इसकी कोई चिन्ता नहीं। हम अपनी मातृभूमि के लिए हँसते हसत अपने प्राणों को उरसग कर दगे।' और उन्होंने उमी श्रण अपने दीवान, सेनापति और अन्य उमराव सरदारों को एकत्र किया और सारी स्थिति समझायी।

युद्ध के नाम से राजपूत लोग उत्साह और उमंग से भर उठे। शत्रु को कुचरने के लिए जोर शोर से तैयारियाँ होने लगीं। चारणा के नये भीत भाग उगलने लग। सेनाएँ कूच करने लगीं। दलपतसिंहजी स्वयं सेना का संचालन कर रहे थे।

मुकाम छापर के सन्निकट दोनों सेनाओं के बीच युद्ध हुआ। खून की नदियाँ बह उठीं। राजपूतों की रक्तप्यासी तलवारों ने मुगलों के दात लटटे कर दिये। सारा क्षेत्र लहलुहान हो गया। जावदीलों को दलपत सिंहजी ने पंजी पराजय दी कि वह मैदान छोड़कर भाग गया।

विभीषण ने सोने की लका को ढहाया था। जावदीलों ने तो मैदान छोड़ दिया लेकिन मूरसिंह ने भागते हुए मन्िका को ललकारा। वह फिर मैदान में आ डटा। दलपतसिंहजी हाथी पर सवार थे। उनके साथ चुरू के ठाकुर बैठे थे जो मूरसिंहजी से मिले हुए थे। मौका मिलते ही ठाकुर ने दलपतसिंहजी को पकड़वा लिया।

अपने सडग से पृथ्वी को कँपा देने वाले दलपतसिंह अजमेर के किने में बंद कर दिये गये। उनके चारा और सग्न पहरा था। सौ सिपाही हर घन्टी चौकस रहने थे। किल की बंद पत्थर की दीवारों में उम कीर का अन्तस पलहीन पछी की भाँति तडप रहा था। खुले नीले आकाश का भार देखकर उनकी आँखें स्वाधीनता के लिए भर भर आती थीं, लेकिन कौन जहाँगीर की सत्ता से लोहा लेता? किमम इतनी हिम्मत थी कि विजरे में बंद शेर को छोड़ा जाना? लेकिन दलपतसिंहजी मुक्त होने के लिए प्राणपण से बटिबद्ध थे। धीरे धीरे उन्होंने कुछ पहरदारों को अपने साथ मिला लिया था। उनसे अजमेर और पूरे राजपूताना की

हलचल का अच्छी तरह ध्यान रखते थे ।

एक दिन जब उदाम गाम धिरी थी । पल नीरव और निस्पन्द थे । सध्या की रक्तमय किरणों किले की प्राचीरा के पीछे ढन रही थीं । अप्रत्याशित भोगन का बाल लेकर आने वाले रसोइये ने अज किया, 'सम्मा अन्नदाता ! मारवाड के हठीसिंह नाम के बम्पावत सरदार अजमेर पघारे हैं ।'

'वे कहीं जा रहे हैं ?'

वे अपनी सुसराल जा रहे हैं ।

क्या वे नितान्त अकेले हैं ?'

'नहीं, अन्नदाता ।'

'उनके साथ कौन-कौन है ?'

'दो सौ सवार और दो सौ पैदल ।'

दलपतसिंह अत्यंत गम्भीर हो गये । बन्दीगह के जीवन में रहते रहते उनके मुख का अोज चला-सा गया था । दीध निश्वास छोड़ते हुए वे बोले "आप जाति के ब्राह्मण हैं । ब्राह्मण न सदा क्षत्रियों की सहायता की है । विप्र का ससग सदा धम के लिए हुआ है । आप मेरा एक काम करेंगे ?

अन्नदाता का हुनम मिर झाला पर । अगर इस गरीब ब्राह्मण की चमड़ी की जूती बनाकर भी आप पहन लेंगे, तो मैं अपना अहोभाग्य समझूंगा ।

त्रिने म निमिर घुम आया था । मंगलची ने आतर मंगल जला दी । उनके बाँपते प्रकार म दलपतसिंहजी ने कहा, 'आप मेरे देवता हैं । आप हठीसिंहजी का कहिए कि बीकानेर नरेश आपसे मुजरा करना चाहत है ।

'मैं आपका सन्नेगा अभी उनके पास पहुँचा दूंगा ।'

'और उत्तर क्या दोगे ?'

'कन मुबह जब मैं आपके लिए दूष लाऊँगा ।'

“मैं जीवित रहा, तो आपको इस उपकार का बहुत बड़ा पुरस्कार दूंगा।”

ब्राह्मण चला गया। शन शनै दिगंतयापी निस्तब्धता में रात डूब गयी। चिन्तामा से आवृत दलपतसिंहजी नहीं सो पाये। कैसे भाग्यहीन हैं व कि एक पूरे राज्य के स्वामी होकर यहाँ बंदी हैं—नितान्त असहाय प्राणी की भाँति।

रात आँखा में व्यतीत हो गयी।

प्रातः समीर उनमें कुछ ताजगी भर गया। पाठ-पूजा से निवृत्त होते ही ब्राह्मण दूध लेकर आया।

“धम्पावत सरदार ने क्या कहा विप्रवर?”

ब्राह्मण का सिर झुक गया। निराशा से उसका सारा मुख ढँक गया। पाषाण प्रतिमा की तरह खड़ा रहा निश्चल। दूध का गिलास हाथ में ही रहा।

“आप चुप क्यों हैं?”

“धम्पावत सरदार ने फरमाया है कि मैं समुराल से लौटते हुए आपसे भेंट करूँगा।”

दलपतसिंह जी भर भर आये। विगलित स्वर में दीवार की ओर धपलक देखते हुए बोले, “मुख के सब साधो होने हैं। जब प्राणी को दुर्भाग्य घेरता है, तब उसकी परछाई भी उससे विलग हो जाती है। सरदार से आप कहना कि दलपतसिंहजी ने फरमाया है कि मुझ भाग्यहीन से आप क्या मिलने आयेंगे? आप स्वतंत्र हैं। स्वतंत्रता में आप साँस लेते हैं। आपका हर कदम स्वतंत्र है। और मैं एक शत्रिय होकर, एक राज्य का स्वामी होकर बंदीगृह में पराधीनता का जीवन जी रहा हूँ। मुझे मृत्यु के समय यही दुःख-सन्ताप होगा कि मुझ-जैसा एक वीर शत्रिया के पृथ्वी पर होते हुए बन्दीगृह में मर गया।”

ब्राह्मण ने बहुत अनुरोध किया पर दलपतसिंहजी ने दूध नहीं पिया। दुपहलक उनको भाँतों की गहराई में दहक चला, स्फुलिंग-सा।

वे निष्प्राण-से बड़े रहे । जिल की दीवारा को देखते रहे और सींचते रहे 'यह राजवतिप्ता प्राणी को कितना पतित और नीच बना देनी है ।

×

×

×

ब्राह्मण ने जाने ही सम्भावन सरदार को दलानसिंहजी का पुन सत्तेगा सुनाया ।

मेजबान की हवेली बहुत बड़ी थी । हठीसिंह ने अभी घमन (अफीम) लाया था । उसका नशा उनके रोम रोम में उत्साह और जोश भर रहा था । चार न आकर निवेदन किया, "सरदार की गय ! एक ब्राह्मण आपसे अभी मिलना चाहते हैं । वे बट रहे हैं नि एक अत्याययन भज करनी है सरदारजी से ।

'उह सम्मान महिन लाया जाय ।' कहकर ये हुक्का पीते लगे । बठखाने में इस की सुगंध आ रही थी । दीवारों पर तबबारें और ढालें लटक रहा थी ।

मगमली गद्दे पर गाव तस्विय क सहार अधगायिन थे हठीसिंह । अजानुसाहूर्ण प्रगलन बना, गौरा रग गाढ़ छह फूट लम्बाई, बानो को स्पग करन बानो मूछें जिता पर ये अमल के हलक उगा म अभी-अभी नीरु भा रग लेन थ । नीरु उनकी मूछा के बन पर टिक जाता था और व अमन साविया न गाय एरुं जार का ठगका लगा गते थे ।

ब्राह्मण ने प्रण करने ही कहा सुतरा बबून हा ।

आप ब्राह्मण स्वना ! बाई नया सदेगा लाय हैं ?'

'ब्राह्मण न द्यर उधर गया । हठीसिंह क मारे सापी राय हो गय । प्रन उनकी आंया म तर भाया ।

ब्राह्मण दवना का आगन लिया जाय ।" तुरत एरु दाग ने उहूँ आन लिया । ब्राह्मण उम पर बठ गय ।

“अज है, अनदाता ।’ वे रुक गय ।

“कहिए, कहिए आप निश्चिन्त होकर कहिए, ये सब अपने ही हैं । गौरवशाली क्षत्रिय कुल मूय ।”

ब्राह्मण ने दलपतसिंह की सारी वेदना और व्यथा अपने स्वर में घोलकर हठीसिंह को सुना दी । जमे ही ब्राह्मण ने अपना वयान खत्म किया वैसे ही हठीसिंह के तेजस्वी चेहरे पर एक अभूत आलोक दीप्त हो उठा । अपने आपसे बोले, ‘एक क्षत्रिय की ऐसी दुःगत । एक वीर की ऐसी कायर मौत ।’

“अनदाता ! मैं ब्राह्मण हूँ । मैं यह भलीभांति जानता हूँ कि इस तरह का सन्देश लाना लेजाना अपराध है लेकिन एक गूरमा को मैं इस तरह कलपते बिलपते नहीं देख सकता । मृत्यु निश्चित है । उनके आने का क्षण अग्रिम है । फिर किसी स्वतन्त्रता प्रेमी और अपने ही भाइयों द्वारा पडयंत्र में फँसाये हुए वीर को क्या नहीं मुक्ति दिलायी जाय ? यह श्रेष्ठ काय आप जैसे वीरा का ही धर्म है ।’

हठीसिंह का क्षत्रिय धर्म जाग उठा । मूछा पर बल देते हुए बोले, ‘वीकानेर नरेश को वह दीगियगा कि हठीसिंह समुराल बाद में जायेगा, पहले आपको मुक्त करायेगा ।

ब्राह्मण प्रसन्नता में झुका हुआ चला गया ।

हठीसिंह ने एकांत की इच्छा प्रकट की । सभी साथी चले गये । बठनखाने में घोर एकांत व्याप्त हो गया । हठीसिंह को लगा कि बैठनखाने की हर वस्तु पर एक विचित्र मी जडना छा गई है । वह जडता होने होने उठ घेरने लगी । वे समुराल जा रहे थे । उनकी पत्नी यश्रता से उनकी प्रतीक्षा कर रही होगी । उनकी पत्नी चाँदनी में म्नात की हुई कार्द परी ही समझो । अनुपम ज्योतिन अग प्रत्यग । बड़े बड़े लोचन, जस मादनता के सागर हा ।

एक मधुर स्मृति चित्र उनके मन पर उतर आया—

‘मैं अपने पीहर जा रही हूँ, ठाकुर सा ! आप जापा होते ही मुझ

लने आ जाइएगा ।

अपनी बाँहों में अपनी पत्नी को आसन्न करके ठाकुर हठीसिंह बोल 'हम तो एक पल भी आपके बिना नहीं जिता सकते, ठठुराणी सा । आप नहीं जानती कि ये रातें आपके बिना कितनी लम्बा हो जायेंगी हम आपका सदेग पाते ही आपको लेने के लिए आ जायेंगे ।'

अप्रत्याशित लाज से ठठुराणी के कपोल रन्ध्रिम हो उठे, बड़ी बनी आँखों में एक आसन्न सजीव हो उठा । ठाकुर को महसूस हुआ कि उठा तन मोक्ष की तरह विचल रहा है । थोड़ी देर में वे तरल-पदाप की तरह वह जायेंगे ।

भावुकता से बाल 'ठठुराणी सा आपका वियोग मेरे लिए असह्य है । जल्दी आने की चेष्टा कीजिएगा ।'

ठठुराणी के अघर मन्द मुस्मान में डूब गयी । उनकी बाँहा से मुक्त होकर वह प्रकोष्ठ में आ गयी । पीछे पीछे चने आय हठीसिंह । विभावरी अपने पूण धौका पर थी । ऐसा प्रतीत होता था कि आकाश गंगा पूण वेग से प्रवाहित हो रही है । उन पर अनिमेष दक्षि जमाती हुई ठठुराणी बोली "यह सब ईश्वर के अधीन है । क्या बच्चा होगा, मैं क्या जानू ? पर आप मेरा सदेग पाते ही मुझे सममान लेने आ जाइयेगा ।

यदि आपके पुत्र हुआ तो मैं आपकी गाही सम्मान से लेने आऊँगा । दो सौ सवार और दो सौ पदल । आपने पीहर वाले भी देखेंगे कि क्या गाही ठाकुर है हमारा दामाद ।' व अकड से गये ।

दूरगन कोई रात्रि पधेरु बोल रहा था । एक उलू पल फडफटाता हुआ प्रकोष्ठ के आगे से गुजर गया । रात और गहरी हो गयी । और मौन हो गयी । और धामी चाल से ढान लगी ।

दानों समाधिस्थ से लड़े प्रकृति का इग आकषक गान लीला को दमन रहे ।

और यदि लटकी हुई तो ।'

'एमा नहीं हो सक्ता । हमारे लडका ही होगा । ठठुराणा, हमारे

ज्योतिषी ने भविष्यवाणी की है कि हमारे पुत्र होगा।" ठाकुर का वक्ष
गव से फूल भ्राया ।

"फिर आप मुझे जल्दी से जल्दी लेने आइएगा ।"

"वचन देना हूँ कि सन्देशा पाते ही आ जाऊंगा ।"

स्मृति चित्र लण्डित हो गया ।

रानी को वचन दिया था पर बीकानेर नरेश से मिलना भी भक्ति
आवश्यक है । एक राजपूत के निष्प पहला घम होता है पराये दुख को
मिटाना, पराई पीर को हरण करना । लेकिन भाग्य ने कोई विकट
और मनहोना खेल कर दिया तो ? हठीसिंह मन ही मन पाँप उठे ।
उन्हें या लगा, जैसे उनके आगे के सारे रास्ते टट गये हैं । एक उजाड़
प्रातर विस्तृत हो गया है । दूर दूर तक सागाटा छाया हुआ है । ऐसी
निजनता में एक औरत एक फूल से कोमल बन्धे को गोद में लिये हुए
सही है । एक अकेली औरत ! वह औरत है उनकी अपनी पत्नी अपने
नवजात शिशु को लिये हुए ।

ठाकुर विगलित हो गये । कमी कठिन परीक्षा है । लेकिन मैं क्षत्रिय
हूँ । आपद में फँसे हुए किसी क्षत्रिय की रक्षा करना ही मेरा पहला घम
और कर्तव्य है । उन्होंने अपने मन आँगन से अपनी पत्नी के चित्र को
मिटा दिया ।

अपनी गदन को जोर का झटका देकर वे उठे । बैठखाने में जमी
जड़ना को अपनी चुटकिया से उठाने हुए उन्होंने एक हुंकार भरी और
अपने आप निणय लिया, 'मुझे बीकानेर नरेश की मदद करनी ही
चाहिये ।'

उन्होंने अपने विद्वत्तनीय साधियों को तुरन्त बैठखाने में बुलाया ।
अमल की मतभार फिर घुँफ हो गई । एक एक गोली अमल की चढ़ाने
के उपरान्त हठीसिंह ने स्नेह भरे स्वर में कहा "यदि तो मैं आपका स्वामी
हूँ । मेरी आत्मा का पालन करना ही आप सब का धर्म है किन्तु मैं,
परामर्श के बिना कोई काम करना नहीं चाहता ।" और उन्होंने

सिंह जी की सारी स्थिति विस्तृत रूप से अपने साथिया के समक्ष रख दी। अपनी बात को समाप्त करके हठीसिंह ने कहा, "बीकानेर नरेश एक कुशल सभ्य सचालक और अत्यन्त वीर योद्धा हैं। पड़यंत्र और मुगलिया सल्तनत की अपार शक्ति ने उन जस धूरमा का बन्दी बना लिया है। उन्होंने हमसे मुक्ति की प्रार्थना की है। आपकी क्या राय है ?"

क्षण भर के लिए वातावरण गम्भीर बन गया।

उस गम्भीर मौन को तोड़ा उनके साथी महावीर सिंह ने। वह बोला "हम सब नियति के हाथों के तिलोने हैं। कप टूट जायें, यह कोई नहीं जानता। राजपूत को ऐसा पक्क बहूत ही कठिनता से प्राप्त होना है। एक वीर की मुक्ति एक देश के मुक्ति के बराबर होती है, क्योंकि वीर ही पृथ्वी और निर्दोष लोगों की रक्षा करते हैं। वीर ही जन्मभूमि को सन्निहित होने से बचाते हैं और वीर ही अमानुषिक अत्याचारी और निन्धी आक्रमणों से देश की रक्षा करते हैं। ऐसे वीरों की मुक्ति के लिए समस्त देश को बलिदान ही जाना चाहिए।"

मुझे आप लोगों से यही आशा थी। बल ही हम बीकानेर नरेश को मुक्त करायेंगे।"

सब साथी हर्षोल्लास में चले गये। हठीसिंह ने अपनी ठकुरानी को पत्र लिखा 'सिध थी अजमेर गुम सुधाने चिर कुबर ने निखी पिना हनीसिंह की आशिय पढ़ना। हम सब अजमेर में बहुत ही कुशल हैं। उपरब ग्राम बात यह है कि हम यहाँ नये वचना में बँध गये हैं। यह नये वचन आपसे वचना से बहुत ही बड़े और अधिक महत्वपूर्ण हैं। बीकानेर नरेश यहाँ बन्दी का जीवन यापन कर रहे हैं। उन्होंने मुझसे अपनी मुक्ति की कामना प्रकट की है ठकुरानी सा। मैं क्षत्रिय हूँ। एक छोटा सा ठाकुर। एक पूरे राज्य का स्वामी मुझका भरदासना कर रहा है। पता नहीं उनकी मुक्ति न जाने कितना की मुक्ति बन सकती है। मनु एक न एक दिन सभी को धायेगी ही, मित्तु पर हिताय मरना ही क्षत्रिय का प्रथम और श्रेष्ठ धर्म है। पता नहीं कब क्या होगा ?

जीवन रहे, तो जरूर मिलेंगे अथवा आपको मेरी प्रायना है कि आप कुँवर सा का एक सच्चा धीर और धीर प्राणी बनाना। कुँवर को हजारों भाग्य और आपकी उमकी सार सम्हाल।

पत्र दूत के हाथ में दे दिया। दूत देखने देखते बिना हो गया। हठी सिंह को आखें अश्रुपूरित हो गईं।

वह दिन और रात हठीसिंह की आँखों में ही बीती। हठीसिंह— एक इंसान अपनी पत्नी और अपने पुत्र से मिलने के लिए तड़पता रहा। समस्त मानवीय दुबलताएँ उसे घेरती रही। पत्नी का असीम प्रेम और पुत्र का प्रथम दान। सचमुच वह बहुत ही भाग्यहीन है। अनक उतार-चढ़ाव और विचित्र उधेड़वुन।

×

×

×

और नया मवेरा हुआ। निनात ताजा और स्वस्थ सवेरा। हठी सिंह का इमान उनकी वीरता के गौरव के नीचे दब गया। व उठे। उन्होंने स्नानादि स निवसत होकर पूजा किया। अर्चन बंदना समाप्त करके ब्राह्मणा को बुलाया। श्रद्धा में उन्हें नमस्कार करके दान पुण्य किया।

फिर अपने साधियों को बुलाकर आह्वान किया, “हम धीर हैं। हमारा जीवन तलवार की नोर पर रहता है। तलवार की धार पर चलना और लोहे के चने खाना ही हमारा काम है। हम अपने एक योद्धा वीर को शत्रु की धारा से मुक्त कराना है। उमकी मुक्ति ही हमारे जीवन की सफलता और साधना है। हम ऐसे योद्धा का बड़ापि बंदी गह में नहीं मरने देंगे जो शत्रु के दाँत सटटे कर सताता है।”

सभी साधियों ने पड़ग भयानों को नमस्कार करके प्रतिज्ञा की कि हम बीबानर नरेश की मुक्ति के लिए हँसन हसते उत्सव हो जाएंगे।

श्रीर हठीसिंह अन्न दो सौ पदल और दो सौ सवार बहादुरा को लेकर अजमेर के किले पर टूट पड़ा। इस अप्रत्याशित आक्रमण ने मुगल सिनाहिया को हड़ता बक्का कर दिया। उनमें भगदड़ मच गई। व इस बात का भी अनुमान नहीं लगा सके कि आक्रमणकारी कितने हैं? बस घबराकर नितर बितर हो गए। तुरंत अजमेर के सूबेदार को इस हमले की सूचना दी गई। अजमेर का सूबेदार अपनी चार हजार फौज लेकर आया तब तब हठीसिंह ने बीकानेर नरेश दलपतसिंहजी को मुक्त करा लिया था।

हठीसिंह स मले मिलते हुए बीकानेर नरेश ने कहा, "हम आभारी हैं चम्पावन सरदार आपके। हमारा दंग भी कृतन रहगा आपका। बीकानेर में आपका कोई सगाव नहीं है कोई सम्बन्ध नहीं है फिर भी आपने बीकानेर नरेश के लिए जो आहुति दी और प्रयास किए वह सब बीकानेर के इतिहास में स्वयं अशरो में लिखा जायगा।

'आप तैयार हो जाइये। शत्रु यहाँ मात्ता जरूर लेगा।'

महावीरसिंह ने आकर समाचार लिया, 'हम शत्रु न चारा और से घर लिया है।

"कोई चिन्ता की बात नहीं। समझ लो कि हमने बेसूरिया माना पहन लिया है। जब तब रक्त की एन बूँद भी रहे हम शत्रु से लड़ते रहेंगे। हर हर महादेव।

फिर धमासान युद्ध आरम्भ हुआ गया।

चार सौ राजपूत मुक्ति के लिए चार हजार सना पर टूट पड़े। नरमुग्धा के डेर लगने लगे। खून की नदियाँ बहने लगी। घोड़ों की सिंहियाहत्या में सारा नभमण्डल गूँज उठा। राजपूता का शीय देखने बनता था। राजपूत मूला की तरफ शत्रु की सेना को काट रहे थे थे।

गमा प्रदान होता था कि य राठौड़ राजपूत एकत्र हो जायें, तो देग में मुगलिया आगमन हुआ मम कर दें।

अपराह हान-हाने मार राजपूत एक एक करके वीरगति को प्राप्त

हो गये । अजमेर सूबेदार के भी चूने हुए योद्धा मारे गए । चार सौ ने उनकी सेना के एक हिस्से का ही वाकी रखा था । वह हठीसिंह की वीरता पर गदगद हो गया । वह हजारा नरमुण्डा के बीच खड़ा था । कटे हुए सिर, हाथ-पर, घड़ों । क्षण भर के लिए वह युद्ध की विभीषिका से सिहर उठा 'उफ ! जग बितनी खोफनाक घोर हैवानियत से भरी होती है । फिर वह दलपतसिंहजी व हठीसिंह की लाश देखने के लिए बढ़ा ।

शत्रुघा की लाश व बीच दानों की लाशों पाम-यास पड़ी थी । दोना की छुरियाँ एक दूसरे के सीने क आर पार थी, मानो व दोना वीर गधू के हाथ से नहीं मरना चाहते थ । सूबेदार का मस्तर न जाने क्या भूक गया ? वह अपने अधु पोछने लगा ।





एक नयी रावणा

रावणा श्रान्ति स्नान सी पलग पर जा पडी । अपने धनुष्य सौंदर्य का अपनी गोरी गोरी मेह्दी रची हथेलियो म छुपा कर वह बहुत देर तक उ मन और निहाद पनी रहा ।

गयना छोटी मी हवनी के नमस्तीनार पत्थरा के स्तम्भा वाले गंगा म वह फिर घाई । स्तम्भा पर घेन-बूटे मर हूण थे । मरमला अंधेरा तालमर के तिनो को स्पग करना हृषा नगर पर सिम्बन होन लगा था ।

उगसा बाँगी न आगन म तुनमी के सिख के आग दापर जना गिया था । घुघना घुघना उजाना हा गया था ।

गवाक्ष म रण्डी रावणा ने मन ही मन माँ तुलसी को नमस्कार किया। फिर उसे उदासी घेरने लगी। वह सोच रही थी कि कब वह इस बेमन की जिंदगी को जीना बंद करेगी। वह सिर्फ किसी की पत्नी बनना चाहती है पत्नी! और माटी सरदारसिंह उसे सदा आश्वासन देकर चले जाते हैं। वह घुटन रही।

भ्रंघेरा और गहरा हो गया था। गहरे भ्रंघर को अपनी दृष्टि में भर कर वह सोचने लगी—'नयिया ठीक कहती थी कि गरीब की श्रौत के सौ ससम होते हैं। मुझे ही देखो न, जात की दरोगन हूँ, कोई आगे पीछे नहीं है। किसी का सहारा आसरा नहीं। इसलिए दीवान जी अपनी जोरू समझते हैं ज़रकि मैं उनसे बतई प्यार नहीं करती। मेरा उनसे कोद लगाव नहीं। व हृदयहीन पत्थर की भाँति हूँ। अपने पद के मद में चूर।

गवाक्ष में प्रकाश की एक लकीर फैल गई थी। उसने धूमकर दगा, नयिया ने शयन कक्ष में भी दीपन जला दिया है। इत्र मिश्रित तेल का दीया। दीये के प्रकाश से पलंग के पायदान नगे दपण चमक उठे। भाव फानूसा में लटकती भासरेँ जगमगा उठी।

वह थोड़ी दूर के लिए बाहर बरामते के सगमरमरी फल पर चढ़ल कदमी करती रही फिर आकर पलंग पर बठ गयी। वयमधि की उम्र के पार करते ही उसके धग प्रत्यग में यौवन-बुसुम गध विपरात हुए बिले। तब उस पर दृष्टि पड़ी कूटनीतिग और दीवान सम्पर्सिंह माहेदररी की। वे उसके रूप पर मोहित हो गए। उन्होंने तुरन्त एक सिपाही भेज कर उसे अपनी हवनी की रंगाला में बुलाया। तब दस असहाय और सम्बल-हीन रावणा का सहारा थी—उमकी बुधा। लोभी बुधा। वह थोडसी रावणा को सगा घजा कर दीवान की हवेली में गयी। रावणा का गोरा रंग हनुके गुनावा घाघरे और झोहन में गहन उदा था। उमकी पजरारी बड़ी-बड़ी मीन सी भाँति मन को मोहित कर लेती थीं।

उसने जाकर दीवान जी को मात्ररा लिया। राग गच्छ गी।

जी हुंके की नला की गुडगुंते हुए बोने, 'दरोगिन ! हम तेरी बेटी भोल चोखी नगती है ।'

अपने ओढ़ने के पल्लू को दांता के बीच दबाती हुई बुझा बोली, 'न—न—न— माइ-बाप यह भरी बेटी नहीं, भतीजी है । बचपन से अनाथ है । मैंने ही इसे पाल पोस कर इती बड़ी की है ।'

अपने कठोर कालिमा लिए हुए होठो पर जीम फिराते हुए दीवान जी बोने हाथ पाँव सूब निकाले हैं । क्या नाम है ?''

अनन्ता ! मैं इस रावणा ही कहती हूँ ।' उसने अपनी यकी पलका को भटका देकर मिमिचाया और तनिक लम्बे स्वर में वह बोली, वैसे इसका नाम पूगलगढ़ की पद्मिनी रहना चाहिए । पूगल भी इतनी फूटरी नहीं होगा । सच कहूँ दीवान जी ! ऐसा रूप भोल कठि नाई से मिलना है ।

हम यह पमन्द है । तुम्हें कोई एतराज तो नहीं है ।'

जीभ तिमाल कर तथा दोना कान एक साथ पन्ड कर बोली, अनन्ता ! भला एमा मैं कस कह सकती हूँ । आप इस घरती के घणी हैं । यहाँ की छोटी-बन्ती सभी चीजों पर आपका अधिकार है । आपकी चीज का घणियापा मैं कंस कर सकती हूँ ?

रावणा यह सत्र सुन रही थी । गम्द शत्रु को आत्मसात करने की चष्टा कर रही थी । चेष्टा के माय उनके मम को भी समझ रही थी । उनकी आत्मा न जसे सोच लिया था कि उसका एक वस्तु के रूप में मोग किया जा रहा है ।

उग यह सत्र अच्छा नहीं लग रहा था । सरूपसिंह के रग रूप और बातबात के तरीका म प्रम की गध नहीं थी । सिफ वासना थी मूय था ।

बचपन से ही उनकी एक इच्छा था कि यह एक अच्छे धात्री की दुन्दन बन । उनके अपने बच्चे हा । छोटा सा घर हो । उता पर

मे पति का रोप और जोश दोना हा । बच्चा का रोना और मुस्कराना नू जता हो । पर उसके भाग्य और बुझा की अभावा म प्रस्त जिदगी ने साथ नहीं दिया । वह हाट की सी बस्तु बन गई ।

फिर उसकी बुझा के भाग्य बदल गये ।

सरूपसिंह जैसलमेर के महारावल मूलराज (द्वितीय) पर सम्पूर्ण रूप से हावी थे । समस्त शासन का एक भी पत्ता उनके सकेत के बिना नहीं हिलता था । गड के एक एक कदम पर उनकी बूटनीति के जाल बिछे हुए थे और वे स्वतंत्र रूप से जो चाहते थे, वही करते थे ।

उन्होंने तुरन्त रावणा के लिए यह पक्की हवेली ले दी । उसमें सुख और विलास के सारे प्रसाधन एकत्रित कर दिए । फिर एक दिन दीवान जी ने अचानक अपनी आने की सूचना भिजवायी ।

उस समय अपना हाँ था ।

सूखे देवता पश्चिम के प्रांगण की घोर अग्रनर हाँ रहे थे । सूखे देश की सूखी तपती हवा भी शरीर में एक विचित्र कम्पन उठा रही थी ।

बुझा प्रसन्नता में किलबती हुई आई । अपनी भतीजी रावणा की बलया लती हुई बोली, 'तेरा दरिद्र दूर हुआ मेरी लाडेलर । देख, दीवानजी ने कितना अच्छा "कण्ठा" भिजवाया है । धरी मुन, आज रात वे हमारे यहाँ पधारेंगे ।' बुझा गभीर हो गई । उसकी लालची नीली आँखें अपने आसतन आरार से बड़ी हो गई । उसने मुँह से अपना मुँह भिटाती हुई वह बोली, 'लाडी सा ! जरा हुणियारी से यातचीत करना । दीवानजी प्रसन्न हो गए तो ज म-ज-मातरा के कण्ठ और दरिद्रता दूर हो जाएगी ।'

रावणा इतने दिन से बुझा की शनिविधि को देत रही थी । समझ रही थी कि बुझा ने नितान्त अभावप्रस्त जीवन जिया है । उसका पति स्वयं एक "गोला" था । जीवन भर रोगियों के बदले राबले में जी हुजुरा करता रहा । पीडा और दासता उसने अन्तिम साथ सह रही । उसकी बुझा भी भारी-भारी सामन्ता, सरदार, उमरामा और अधिकारिया की

हवेली में घूमती रही। अपने साधारण रूप से वह किसी को नहीं सुभासकी। इसीलिए आज जब उसे थोड़ी सी सुख सुविधा मिली तो वह बावली हो गई।

रावणा ने सब कुछ जानत हुए भी पूछा, "दीवानजी क्या आयेंगे? उनका रात को यहाँ क्या काम है?"

दुष्या के होठों पर एक निलज्जता की हसी तर गयी। उसके गले में हाथ डालकर उसकी नाक की नथ को छूबर वह बोली "वे तुम्हारी इस नथ को खोलेंगे। नहीं समझी। फिर समझ जाएंगी। दीवानजी बड़े दृढियार हैं।"

रावणा को रोमांच हो गया।

×

×

×

रात धीरे धीरे ढल गई।

रावणा के पयक कक्ष में अब भी दीया जल रहा था। आज अप्रत्याशित एक घोर घटना घटित हो गई।

रावणा सोने से पहने सोलह शृंगार करके गवाश में राठी था। सनी लता ताम्बूल खा रही थी। इसी समय भागी सामन्त 'सरदारसिंह घोड़ पर मयार नीचे से गुजरा।

रावणा अपने ध्यान में निमग्न थी। उसने बिना दसे ही पीक धुक दा। पाक की फुहार की चट बूँदें भाटी सरदारसिंह की पोशाक पर पड़ गई। सरदारसिंह एकदम प्रोथ में भर उठा। उसने ऊपर की घोर देखा मय हा उतन म्यान से तलवार सीधा।

दुष्या है बन्धुमोज?' उसने गनकर पूछा।

फिर उतर का भार दगा तो दग्ना हा रह गया। अनुपम सौन्दर्य भागी सामन्त के नशा में समाविष्ट हो गया हो।

रावणा भी उस यौवन की दहलीज पर सटे भगवानुवाट यात मुवक

को देखती रह गई। मद्धम स्वर में बोली, "मुझे खम्भा वरिए सरदार, मुझसे मूल हो गई।"

सरदारसिंह अपलक दृष्टि से रावणा को मर्महित बरके खला गया। उमका प्रलौकिक यौवन रावणा के मंदिर भलस नयन में समाया रहा।

ष द्रज्योत्सना स्वर्णिम बालुका प्रदश पर सोयी हुई थी। मधुर स्मृति में वचन रावणा 'डागले' (छन) पर आ गयी। देखती रही मौन नगर को।

तभी दीवानजी ने आकर उमके द्वार को खटखटाया। बुधा ने द्वार खोलकर कोनिश को— 'खम्भा धन्नदाता घणी वृषा की। पधारिए, पधारिए।

दीवानजी ने बुधा के समक्ष कुछ मोहरें पेंकी। बुधा इन मोहरों पर झपट पड़ी। उमकी आँवा म भूख थी, मयानक भूख।

दीवानजी ने पूछा "रावणा वहाँ है?"

"डागले पर।" फिर उसने पुकारा, "रावणा! दीवानजी आ गये हैं।" वह मोहरा को देखकर खुशी में पागल-सी हो गयी थी।

सरदारसिंह की स्मृति म विस्मृत रावणा थोक पड़ी। नीचे आयी अनिच्छा से। आकर मुजरा किया।

दीवानजी गाव तकिये के महारे बँठ गये। उनके समीप बठ गयी रावणा। बीच म आ गयी बुधा। बोली 'किसी चीज की जरूरत हो तो इस दामी को पुकार लें।'

दीवानजी ने कोई प्रत्युत्तर नहीं दिया। जब बुधा खली गयी तब दीवानजी ने कहा, 'रावणा! हम जल नहीं पिलाओगी?'

रावणा ने जल का गिलास भर कर दीवानजी के हाथ में पमा दिया। दीवानजी ने गिलास के साथ उमका हाथ पकड लिया। रावणा को यह स्पर्श ऐसा लगा जैसे कोई सप दान हो। वह तपक कर बोली, "यह क्या कर रह है आप?"

दीवानजी ने गटागट पानी पिया । फिर उस अपनी ओर खींचते हुए बहा—'तेरी बुझा से सौदा हो चुका है ।"

एक अजीब सी बदबू आ रही थी दीवानजी के वस्त्र से । घृणा की सहर रावणा के हृदय मागर म दौड़ गयी । बोली, "नहीं मुझे छोड़ दीजिए ।" पर दीवानजी ने उस नहीं छोड़ा । जब रावणा ने अधिक विरोध किया तब दीवानजी ने बुझा को बुलाकर बहा, 'मैं तुम दोना को जिंदा लवा दूंगा । मुझसे घोस्वाघड़ी करती हो । रुपये लेकर अब ना-नू । मैं सात मारकर खाया पीया बाहर निकाल लेता हूँ । समझी ।

और बुझा ने एकान्त में ले जाकर रावणा को समझाया "क्यूँ अपना जीवन नरक बना रही हो । बल ही यह घर बार छिन जायेगा और दीवानजी हमें कद म डाल देंगे ।"

इस तरह कुवारी घरा का भाँवल कलकित ही गया । अनिच्छा और समपण ।

/

×

×

सरदारसिंह एक वीर योद्धा । उससे रावणा अपना हृदय लगा बठी थी । पर दीवानजी की नगमता और महारावल पर जित्त तरह का आतक था उनके कारण रावणा दोना का एक हाथ नहीं टकरान देती थी । हर पल मयभीत व आंगकित रहती थी ।

जिमिर गहरा हो गया था । तारे और तेज होकर चमकने लग थे । वह माच रहा थी "जीवन को दतनी मामिक पीडा लेकर नहीं जिया जा सकता । यह झूठा जीवन है । मैं दीवानजी स घृणा करतो हूँ । उनके त्रिस्म स मुझे दुगुप घाती है । फिर भी यह वनमान याय और सत्ता का स्वामा मुझे अपनी वासना स घाहत करता है । भूता बुता नहीं का ।

बुआ ने आकर कहा, “दीवानजी आये हैं। देखो, तुम्हारे लिये हीरे की ओंगूठी लाये हैं।”

उसने कोई उरसाह नहीं दिखाया।

दीवानजी आकर बैठ गये। उह योड़ी ही देर हुई थी कि सरदारसिंह भी आ गया। आकर जोर जोर से बुआ की खटखटाने लगा।

दीवानजी खड़े हो गये। कड़ककर बोले, “कौन है ?”

रावणा ने आकुल भरे स्वर में कहा “भाटी सामंत सरदारसिंह।”
‘वे यहा क्यों आये हैं ?’

व भी मेरे यहाँ आत हैं। मैं उह प्यार करती हूँ।”

दीवानजी ने एक चाटा रावणा के कपोलो पर जमाते हुए कहा, “छिनाल कही की, खाती है भरा और गाती है गीत भाटी जी का। मैं भाटी जी और तुम्हें दोनों को देख लूंगा। दीवान मेहना सरूपसिंह नावरी के गुस्से को अभी तक तुम दोनों ने नहीं देखा है। मेरे शोध से धरती काँप जाती है।”

दीवानजी घब घब करत हुए नीचे उतर गये।

दरवाजा खोला। सरदारसिंह ने आश्चर्यसे पूछा, “आप दीवानजी !

दीवानजी ने दूसरी ओर मुह घुमाकर घणा से धूक दिया।

सरदारसिंह भी तजी से ऊपर की ओर चढा। उसने रावणा से पूछा, ‘यहाँ दीवानजी क्या आत हैं ? तुम चुप क्या हो ? बालती क्या नहीं ? रावणा ! मैं पागल हो जाऊंगा। मुझे बता दो यहाँ दीवानजी क्या आये थे ?’

रावणा ने कोई उत्तर नहीं दिया। जब सरदारसिंह अधिक् व्यग्र हो गये तब वह फफक् फफक् कर रो पडी।

जब हृदय का भ्रमा शान्त हो गया तब रावणा ने सारे व्यतीत को अनावत करते हुए कहा, आप जिसे अधिक् का पात्र समझते हैं वह एव पातुर से अधिक् नहीं है। कु वर सा ! आप इस गदगी को मत छुड़ण आप मुझे भूल जाइए !”

दीवानजी ने गटागट पानी पिया । फिर उसे अपनी भोर खींचते हुए कहा—“तेरी बुझा से सौदा हो चुका है ।”

एक अजीब सी बदबू आ रही थी दीवानजी के बदन से । घणा की सहर रावणा के हृदय मागर म दौड गयी । बोली, “नही मुझे छोड दीजिए । ” पर दीवानजी ने उस नही छोडा । जब रावणा न अधिक विरोध किया तब दीवानजी ने बुझा को बुलाकर कहा, ‘ मैं तुम दोनो को जिन्ना जलवा दूगा । मुझसे धाखाघडी करती हो । रुपये लेकर भव ना-नूं । मैं लात मारकर खाया पीया बाहर निकाल लेता हूं । समझी । ’

भोर बुझा ने एकान्त म ले जाकर रावणा को समझाया, ‘क्यू अपना जीवन नरक बना रही हो । कल ही यह घर बार टिन जायेगा और दीवानजी हमे कद मे डाल देगे । ’

इम तरह कुवारी धरा का घांचल कलकित हो गया । अनिच्छा और समपण ।

×

×

×

सरलरामिह एक वीर योद्धा । उससे रावणा अपना हृदय लगा बंठी थी । पर दावानजी की नगमता और महारावल पर जिस तरह का प्रानक था उसके कारण रावणा दोना का एक साथ नही टकरान देती था । हर पन भयभीत व घातकिन रहती थी ।

निमिर गहरा हो गया था । तार और तेज होकर चमकने लगे थे । वह मोच रनी थी । तवन को इननी मामिक पीडा लेकर नही जिया जा सकता । यह झूठा जावन है । मैं दीवानजी स घृणा करती हूं । उनके क्रिम से मुझे दुगय घानी है । फिर भी यह वनमान माय और सत्ता का स्वामी मुझे अपनी वासना स माहव करता है । भ्रूसा कुता कहीं का ।

बुझा ने आकर कहा, "दीवानजी आये हैं। देखो तुम्हारे लिये हीरे की अगूठी लाये हैं।"

उसने कोई उत्तराह नहीं दिखाया।

दीवानजी आकर बैठ गये। उन्हें थोड़ी ही देर हुई थी कि सरदारसिंह भी आ गया। आकर जोर-जोर से कुंडी सटखटाने लगा।

दीवानजी खड़े हो गये। बड़ककर बोले, 'कौन है?'

रावणा ने आकुल भरे स्वर में कहा, 'भाटी सामंत सरदारसिंह।'

'ये यहाँ क्यों आये हैं?'

'वे भी मेरे यहाँ आत हैं। मैं उन्हें प्यार करती हूँ।'

दीवानजी ने एक चाँटा रावणा के कपोलो पर जमाते हुए कहा, 'छिनाल वही की खाती है मरा और गाती है गीत भाटी जी का। मैं भाटी जी और तुम्हें दोनों को दख लूँगा। दीवान मेहता सरूपसिंह टावरी के गुस्से को अभी तक तुम दोनों ने नहीं देखा है। मेरे क्रोध से धरती काँप जाती है।'

दीवानजी घड़ घड़ करते हुए नीचे उतर गये।

दरवाजा खोला। सरदारसिंह ने आश्चर्य में पूछा, 'आप दीवानजी!'

दीवानजी ने दूसरी ओर मुँह घुमाकर घृणा से पूक दिया।

सरदारसिंह भी तजी से ऊपर की ओर चढ़ा। उसने रावणा से पूछा, 'यहाँ दीवानजी क्या आत हैं? तुम चुप क्या हो? बोलती क्या नहीं? रावणा! मैं पागल हो जाऊँगा। मुझे बता दो यहाँ दीवानजी क्यों आये थे?'

रावणा ने कोई उत्तर नहीं दिया। जब सरदारसिंह अधिक् ध्यप्र हो गये तब वह फफक् फफक् कर रो पड़ी।

जब हृदय का झुंझा शान्त हो गया तब रावणा ने सारे व्यतीत को अनावन करत हुए कहा, 'आप जिसे अघना का पात्र समझते हैं, वह एक पातुर से अधिक् नहा है। कुंवर सा! आप इस गदगी को मत छुड़ए! आप मुझे भूल जाइए।'

सरदारसिंह पीडा से कराट उठा, "मैं ऐसा स्वप्न म भी नहीं साच सकता। रावणा ! मैं तुम्हें अपने हृदय की रानी बनाना चाहता था। तुम्हें मन्दिर की मूर्ति बनाना चाहता था पर तुम चौराह की धूल हो गयी।'

रावणा ने 'पवित्र विपत्तिन स्वर म कहा, ' रावणा क्षमा नहीं मागनी, वह आपसे सजा चाहती है। मैं पापिन हूँ, पर प्यार मैंने आपको ही किया है। आप मरी विवशता नहीं जानते। दीवानजी बड़े निदमी हैं। व आपकी जिन्ना नहीं छोड़ेंगे। मैं सौगंध राती हूँ कु वर सा। तन जरूर भपावन हे पर मन, मन पावन है। मैं मन से सदा आपकी जय करती हूँ। इनना सोचिए हम किन्नर लाचार हैं। आप होगियार रहियेगा। दीवानजी अवश्य कोई न कोई चोट करेंग।

सरदारसिंह रावणा के अशु मरे मुख को देखता रहा। फिर उस अपने आतिगन म आबद्ध करता हुआ याला सचमुच तुम पावन हो। रावणा मैं इस दीवान के वच्चे की ।'

'हां कुँवर सा। मुझे इस विनासिना और सम्पन्नता से दूर ले चिनिय। मैं किसी की बहू बनना चाहता हूँ। किसी के वच्चे की माँ। पर यह जीवन और उसके हातान आदमी को क्या स क्या बना देते हैं। कोई न मैं जानता। मुझे आप चाहिए सिफ आप।'

'तेमा ही होगा।'

रात भिमत्रिया म डूबती हुई सो गयी।

×

×

×

शुद्ध स्नि वा—

मन्मथान्नि वा त्योहार था।

सरदारसिंह गुणह-गुण ही महारावन मूनराज ५ बडे पुत्र रावसिंह

के पास गया। रायसिंह के जेबखच म दीवानजी ने बड़ी कटीती कर दी थी। वह प्रतिशोध की भाग में जल रहा था। वह किसी भी क्षण दीवानजी को पराजित करना चाहता था। जब सरदारसिंह ने उसको मडकाया तब वह उ मादित स्वर में बोला, 'मैं क्या करूँ ? मैं उसको मौत के घाट उतारना चाहता हूँ।'

"आप उन्हें आज भरे दरवार म मत्यु दीजिए। सारे सामन्त-सरदार इम दुष्ट के कुचक्रों से तग हैं। यह उनकी मान मर्यादा को धूल म मिलाने के लिए प्रयत्नशील है। आप भरे दरवार म दीवानजी को बल कर ललिए। मैंने प्रमुख सामन्तो से बातचीत कर ली है।"

"सच।"

'मैं कुलदेवी की सौगंध लाकर कहता हूँ।'

मुवराज जरा विचार में पड गये।

सरदारसिंह ने पुन रहा, 'आपके हाथ म यदि यह अवसर निकल गया तो सारी उम्र हाथ मलते ही रह जायेंगे। इम समय आप असन्तुष्ट सामन्ता की मनस्थिति का लाभ उठाकर महारावल बनने के प्रलोमन ने

प्रतिहिंसा की भाग म दग्य और महारावल बनने के प्रलोमन ने रायसिंह को विचलित कर दिया। वह भीहूँ टेढी करके बोना, "फिर आज गढ के अमरविलास बक्ष म आप मावधान रहियेगा।'

सरदारसिंह वहाँ से सीधा रावणा के पाम आया।

"आप आ गए कुँवर सा।"

'हा रावणा आज मैं तुम्हे अपने गाँव ल जाऊँगा। तेरे पावन मन के बँदावन म प्रेम का नया दीया जलाऊँगा।'

कुँवर सा। मुझे अपने चरणों की दामी ही बना लीलिए। पर यहाँ से ले चलिए।"

'क्षत्री के बचन हैं।' फिर उसने सारी स्थिति समझायी। रावणा गदगद होकर बोली 'कुँवर सा। मैं गन्ना किसी एक की बहू बन कर रहना चाहती थी। मेरी नारी ममता के लिए तरस रही है। पर यह

बुझा यह कुटनी है । इसे धन चाहिए, केवल धन ।'
सरदारसिंह वहाँ से लौट आये ।

×

×

×

अमर विलास म दरवार लगा था । महारावल मिहासन पर बठे ये तभी दीवान जी अपनी मूर्छा पर ताव देते हुए आए और बोले, 'यह पवित्र त्योहार ऋतु-परिवर्तन का प्रतीक है । युवराज को इस अवसर पर हम कोई विशेष अधिकार नहीं द पायेंगे, लेकिन उनके व्यय म थोड़ी और कटौती करेंगे, क्याकि राजाने में रुपया की कमी है और युवराज बहुत ही व्यय सच करते हैं ।' बात समाप्त करत हुए उन्होंने मूर्छो पर ताव दिया ।

युवराज ने चीख कर कहा "दीवान जी !"

दीवान जी के होठो पर बुटिल हसी थी ।

फिर युवराज भपट पडे उस पर । देखते त्खते उनकी तनवार ने दीवान जी को भौल के घाट उतार लिया ।

महारावन चीखे पर उह भी सामन्ता ने नजरबन्द कर लिया । सरदारसिंह इस पदयत्र का प्रमुख व्यक्ति था । वह यहाँ से सीधा रावणा के पास आया ।

वह साढगी अपन माघ लाया था ।

रावणा तैयार खडा थी । बुझा कटी गयी हुई थी । सरदार ने उसे साढगा पर बिटाया और कहा आज स तुम मरी गवस्व हो । जल्दी ही यहाँ स दूर भाग चने हम लोगा न दीवान जी का काम तमाम कर लिया है ।

रावणा प्रमन्नता म उछल पडी । फिर नितान उन्म हो गयी ।

उसे वहूनी दीवान के साथ व्यतीत किए वे पीड़ित क्षण याद आ गये । वह सिसव पड़ी ।

सरदारसिंह ने पूछा "भरे, तुम रोगी क्यों हो ?"

'मुझे अभी भी भय लग रहा है कुवर सा, कि इस भाग्यहीना की यात्रा बिना विघ्न पूरी हो जायेगी कि नहीं ?'

'शुब कोई बाधा नहीं है रावणा ! यह नयी यात्रा निष्कटक रहेगी ।'

झोर साइणी चल पड़ी, रेतीली पगडडी पर धीरे धीरे, बहुत धीरे ।
 झोर रावणा, कल्पना लोक में एक नयी रावणा जन्म ले रही थी ।
 नववधू-सी, बच्चों की माँ ! एक नयी रावणा, एक नयी झोरल !
 झोर साइणी धूल के धीरे में खो गयी ।





शाहजहाँ का सन्देह

आज भी इस किले की दीवार नीरवता के आँसू बहाया करती हैं। आगरे का यह किला जिसमें किसी समय भारत के एक कला प्रिय शहजाह के अन्तिम दुःदिन बीते थे। वह शहशाह जिसकी कला और प्रेम प्रियता का प्रतिरूप है यह ताजमहल, तब ताज की कठोर पत्थर की छाती में छिपी मुमताज बेगम की प्यार भरी आत्मा अपने पागल पति की ऐसी दुःगा देखकर फट पड़ी थी और उसे ऐसा अनुभव होने लगा था जैसे उसका पति नितांत बिरल और हतबुद्धी या होकर कह रहा है— हे मेरी मन की ताजमा और कब्र के इस पवित्र अचल पर मेरे ये आँसू पत्र बनकर सदा यह कथा कहते रहेंगे। एक समय ऐसा आया जब प्रेम की पवित्र आत्माओं ने एक पिशाच को पैदा किया जिसने हम कद में डाल कर तड़पा तड़पा कर मारा।

इन्ही पत्थर की निष्प्राण दीवारों में दिल्ली का सम्राट शाहजहाँ अपने अन्तिम दिन बिता रहा था।

शोषहर का समय था। चिलचिलाती धूप से समस्त भागरा आकुल था और आकुल थी यमुना की शक्ति लहर जो ताजमहल के प्रतिबिम्ब की अपने अन्न में समेटे बूलों से टकराती हुई धीरे धीरे बह रही थी। सम्राट ने निरीह मानव की तरह उन लहरों का और दखा और फिर रा पढ़। आत्मा के आँसू झुर्रियों युक्त गानों से होते हुए दाढ़ी में उलझ गए। आँसुओं के दूफान ने आँसु की ज्योति में धुंध पैदा कर दी और जब धुंध दूर हुई तो उन्हें अपना ताज याद आया और ताज के साथ मुमताज और मुमताज के साथ उसका अन्तिम क्षण। जब मुमताज की आँखें कल रही थीं 'अपने प्रेम की याद का एक आलीशान स्मारक है जो हम दोनों को भर बना दे। और इसी भर स्मारक के लिए शाहजहाँ ने अपने मन की शक्ति तक को भी बच दिया था, ममीरा गरीबी और मजदूरी को ताज की मीनारों के निर्माण में बलि चढ़ा लिया था। सम्राट की अशान्ति बढ़ गई। उनके दिन में ऐसा अनुभव हो रहा था, मातो, उन सब बलि लिए गए मजदूरों की चीन स्त्रियाँ अनाथ बच्चे और तावा पिता सब क सब उस अभिशाप दे रहे हैं और वे अभिशाप आज फलामूत होकर उसे अशान्त कर रहे हैं।

तभी गम लू का तन जोना आया। शाहजहाँ का ध्यान अपने मन की ओर गया जो सूख रहा था। उन्होंने रक्षक को पुकारा और एक सम्राट की तरह आदेश दिया—“हम ठंडा पानी दिया जाय क्योंकि मुराही का पानी गम हो चुका है।”

रक्षक ने तुरन्त अस्वीकार करते हुए कहा—“गुस्ताली के लिए माफी, यदि आप हिन्दुस्तान के शाहशाह का दूधम भोगवा देन हैं तो हम आपको और पानी से सजने हैं वरना हम मजदूर हैं।”

सम्राट की आत्मा आहत-सी हो गई। आँसु के आँसू बूँदों की शक्ति बरस पड़े। उन्हें स्मरण आया—जिस तरह मकड़ के बच्चे जू-

दने वाली माता को भी खा जाते हैं उसी तरह यह काला साँप मुझको खा जायगा खा जायगा, अपने अबा के बनाये इस हक्मन को खा जायगा, भाइयो को खा जायगा । शोध मे उनका बेहरा तमतमा आया मुटिठयाँ बंध गई और रोन राते लिखने बठ—

‘गहन्दाह हि दोस्ता !

आपकी कैद के बन्नी की सुराही का पानी गम हो चुका है इसलिए उमने ठग पानी तुम्हारे नौकरा से माँगा पर नौकरों न आपका हुक्म चाहा । आशा करता हू कि पानी से भी गये-गुजरे अपने अबा को हुक्म मिल जायगा ।

बदनसीब—

‘गहजहा

मुगलिया साम्राज्य का अन्तिम सम्राट औरंगजेब अपने पिता द्वारा ऐसा विवशता भरा पत्र लिखा हुआ देखकर एक श्रूर अट्टहास कर उठा । उसकी आँखें दम्भ से और भयानक हो गई । पत्र को बार-बार पढ़कर वह अपनी महानता का मूल्यांकन कर रहा था । सोच रहा था—

‘गहजहाँ ने खुद इस बात को लिखकर मजूर किया कि इस हक्मन का असली हकदार मैं हूँ मैं हूँ । अहम की पराकाष्ठा ने उसे पागल कर दिया । मनमन ही लेखनी चला दी । उत्तर में कुछ विरोध नहीं था । केवल दा गलत था—

‘ जिस स्याही से आपन मुझे खत दिया है उसी स्याही को पीकर अपनी प्यास बुझा लीजिए ।’

उत्तर मिला पर उममें अन्नाकार न था । अपना यह उपमा दखकर सम्राट रो उठा । उसी क्षण उहाँने औरंगजेब से मिलने की उत्कण्ठा प्रकट की । उम प्रायता का स्वीकार कर दिया गया ।

यमुना के सौम्य कून पर औरंगजेब का निवास स्थान था । अत्र गहजहाँ को जन माग से वहीं तक ल जान का प्रबंध किया गया । माग

म नाविका न थोड़ा आहार किया । धालू भुजियो की नमकीन मुग ध ने शाहजहाँ को अपना भोर आफपित कर लिया । उह बीती बातें स्मरण हो आई कि एक दिन उन्होंने युवावस्था मे इसी प्रकार अपने साधिया के साथ शिकार मे लौटते समय धालू भुजिए पाये थे । स्मृति ने हृदय को बमजोर कर दिया । साख चाहने पर भी व अपने मन को न मता सके और अन्त मे कह ही उठे—“मदि कीई एनराज न हो तो थोड़े से भुजिये हम भी द दो ।

बादशाह की इस त्रिपसला पर एक मल्लाह रो उठा । शाहजहाँ की आंखा मे उमरी वस्त्रा को पहचान कर यह अनायास कह उठा—“कुदरत के खेल निराले है । यह वह हाथ है जिमके सामने सार मुन्ब का हाथ फँचा रहता था आज एक नाबीज मल्लाह व सामने फसा है ।” उसने तुरन्त थोड़े भुजिय ही नहीं सब के सब शाहजहाँ की ओर बढ़ाए कि विसा ने राका—“अहमद ! सम्राट् श्रीगजेब बन्दी पर किए गए ऐसे रहम की सम्त सजा देने है ।”

“पर मे भी ता हमार मालिक है ?

“हैं नहीं, ये । आज ये हमारे बन्दी है और बन्दी की विमा तरह मदद करना हबूमन का गुनाह समभा जायगा ।

“तो ?”

तुम अपने सारे धालू भुजिए सा लो इह अपने हाल पर छोड़ दो । सेनापति पुन अपने बाय मे व्यस्त हो गया ।

सम्राट ने अपना पना हाथ मल्लाह के सामने स हथकर आकाश के समान फला दिया । दो घंटा मौन रहने के पदचात् ये इठान बोन पडे—“मेरा सन्दह भूठा है मरा दाब भूटा है । गुरु वाणी मे जा लिया था वह ठीक था, एकदम सच, सोलह आने सच ।

और, एकाएक अतीत को एक पन्ना उनकी आंखा के समान चित्र की भांति धूम गई ।

एक बार वे अपने कुछ साधिया व साथ पजाव व एक गुन्गार

घोर जा रहे थे ।

गुरुद्वार में अचना और बचना का अत्यन्त मुहावना और मंत्रमुग्धकारी समा बँधा हुआ था । वाणी के पाठ की ध्वनि से सकल वातावरण गुजित था । प्राचीरो में लगी प्रकाशमान उल्लासों के प्रकाश पुजसमस्त गुरुद्वारा उदभासित था ।

गन गन देवभक्ता और पुकारियों में निस्तब्धता छा गई । साथ ही सबकी दृष्टि मुख्य द्वार पर जा लगी । मुख्य-द्वार से एक अलौकिक प्रतिभा प्रवेश कर रही थी । यह थे महान त्यागी और दूरवीर नरश्रेष्ठ गुरु गोविन्दसिंह ।

गुरु गोविन्दसिंह अपने पूर्व निर्दिष्ट आसन पर आसीन हुए । उनके बटने के साथ-साथ समस्त जन-समूह बैठ गया । पाठी ने गुरु वाणी के वचनों का पाठ आरम्भ किया । श्रोतागण तन्मय होकर सुन रहे थे । पाठी ने कुछ उच्च स्वर से एक वचन पढ़ा—

नजर अपठठी जे करे मुलताना घा सपाउदा ।

भिय मगे सर न पाउदा ।

अर्थात्, 'ज भगवान की दृष्टि विपरीत हो जाए तो मुलतानो की पसियारा बनाकर वह उनसे घात खूबाता है और भीत मंगन पर भी उह भाष रहा मिननी ।

तभी द्वार पर एक अचरितचित्त किन्तु प्रतिभा सम्पन्न आवृत्ति प्रवेश करना-बरती उल्टे पाँव लौट पड़ी । वचन का श्रवण उसने भली भाँति कर लिया था । बाहर आकर वह अपने एक साथी से गम्भीर स्वर में बोला— 'मने आज गुरु वाणी का एक वचन सुना, जिसमें हमें हकीकत की गूढ़ भूत मानूम हुआ 'सिगण हम उल्टे पाँव लौट आए ।'

यह ज्ञान अछा ही किया परवर दिगार । एक चापतुंग ने मलाम बरक बना ।

उमक मनन की सचाई पर हम गक है । भला कीर एगा मधुप्य होला जो एक बाग्गाह के भिगारी बन जान पर भीत नहीं आयेगा ।'

‘सब डालेंगे गरीब परवर ।’

‘तभी तो यह शक-यकीन के साथ दिन में घर किए बठा है ।’ शाहजहा ने दम्भ भरी नृष्टि से अपने प्रत्यक सिपाही को देखा । सिपाही सम्राट की चाह को भाँप गए । अपने प्रभु का प्रग न करने के लिए सत्रने एक स्वर में कहा—‘आप ठीक कहते हैं जहाँपनाह ! क्योंकि आपका ओह्ला भी खुदा से कम नहीं है । गुरु वाणी हिन्दू जाति की एक धार्मिक पुस्तक है । उसके लिखन वाले साधारण आदमी होंगे और आप खुदा के पैगम्बर हैं इसलिए आपकी राय ज्यादा बजनदार है ।’

इस प्रकार की प्रशंसा सुनकर शाहजहा की आँखें गय स चमक उठी । हाठा पर एन मिथ्या विजय का उल्लाम मुस्कान बनकर छा गया । मातो उनकी आँखें कह रही हैं—‘मर गे द श्वर के गदो से कम नहीं । प्रत्यक बात लिखने से पहले एक साहित्यिक और पयप्रदशक नेना को जीवन के अनुभवों को अच्छी तरह देख लेना चाहिए, नहीं तो बात भटक जाती है । सत्र के सब श्रवों पर बटे चल जा रहे थे । सबने हाँ में हाँ मिनानी थी ।’

अतीत का चलचित्र समाप्त हो गया । नाव में धे बहोग हो गए थे अपने ही दद में । इसलिए उह वापस आगरा लाया गया । हत्तीम उपचार कर रहा था । सम्राट को चेतना में आत देखकर वह प्रशंसा से खिल उठा । पर सम्राट ने चारा और देखकर धीरे में कहा—

नजर अपठठी जे करे मुलताना या खपाउ दा

भिन्ने मगे मर न पाउ दा ।

इस बार उनके स्वर में गुरु वाणी के इस वचन के प्रति गहरी आस्था, विश्वास और श्रद्धा थी । सचाई उह एक एक गद में मालूम पड़ रही थी ।

सारे व्यक्ति इस वचन के रहस्य से अनभिन्न चित्रवन में राडे-गडे सम्राट के चेहरे के उतार चढ़ाव को देख रहे थे ।

[लोचनया पर आधारित]



क्षण भर को दुल्हन

बाँधी प्रसन्नता के आवेग में भागी भागी छापी ।
उमकी साँस फूल रही थी । केसरिया रंग की चूनड़ी पीछे
मरक गई थी । गहनी रत्ने पाँवा में पायल छनक छनक
करती एक लय में बज रही थी ।

राजकुमारी कोडमने अपने निजी कण के गवाश से
पावम ऋतु के धूल रजन ज्योत्सामय आकाश को देख
रही थी । उमकी गभीर दृष्टि में उगत परछाइयाँ तैर रही
थीं । दूर-दूर तक मौन मीया हुआ था ।

अपनी आस बाँदा भारती की भागत हुए आत देखकर
उमका एकाग्रता भंग हुई । पलका पर जो व्यथा पराग
एकत्रित हो गया था उस उमने अपनी मदुस हृदयियों से
दीप निन्वास के साथ पाछा । फिर भारती की ओर उमुस
हुई और टूटन स्वर में बोली, क्या है ?'

“बाई सा, अभी कुंवर बजे-द्विजो कह रहे थे कि पूगल के भाटी राजकुमार सादुल न एक साथ दो दोरा को मार डाला। सचमुच ऐसा मोझा इस समय भूमि पर नहीं है।”

और यह प्रशस्ति उनके आत्म लाक म कई दिना से अकुरित प्रणय बीज पर जल मिचन कर गई।

वह पीतल के मण्ठी दीवट पर रखे दीपक के सानिकट आयी और उसकी बाती को ठीक करत हुए बोली ‘सादुल जी नर नाहर हैं। पर मेरे भाग्य म ऐसे गुरखीर पति कहां? राव सा ने मरे भाग्य को बचपन म ही मारवाड के चूडोजी राठीड के पुत्र अरड कमल के सग बांध दिया है।’ काडमदे इतना कहकर मखमली गम्या पर आकर अध शायित हो गयी। उनका मन अपने अतर की दुनिवार पीडा से दहसा उठा जैसे उमे अरड कमल के साथ निश्चित किया हुआ विवाह सम्बन्ध कतई पसन्द नहीं है। उसने अपने नयन क्षण भर को बन्द किये और फिर वह उठकर समीप रखे एक लकड़ी के अत्यन्त आकषक स दून के पास आई। उसे खोला और उमम से एक चित्र निकाला। चित्र नितांत तरुण का था। विशाल नेत्र और आजानु बाँहे। वेश पर लटकता तीन विभिन्न मोतिया के हार। वह उस चित्रको अपलक और अपनत्व से देखती रही। यह चित्र सादुल का था।

कोडमदे ने हीरक कणफूल पहन रखे थे। उसकी छाया चित्र के वहेरे पर पड रही थी। उस हिलाकर वह भारली म बोली ‘तुम मरी बाँदी ही नहीं छोटी बहिन भी हो। क्या कोई ऐसा उपाय नहीं हो सकना जिसम मरा विवाह सादुल जी जस नरसिंह से हो जाय?’

‘क्या उपाय हा सकता है?’ निपाय होकर भारली बोली।

‘कुछ भी करो।’

‘मैं प्रयास करूंगी। भारली ने कोडमदे का हाथ अपने हाथ म सकर कहा, ‘सच बाई सा, एक बार भी वह नर-नेसरी आपके हाथ की कलाई भी देख ले तो आपके परिणय के लिए व्यग्र हो उठे। गया रूप



क्षण भर को दुल्हन

बाँगी प्रमनता के आश्रय में भागी भागी भायी ।
उमकी साँस फूल रही थी । केसरिया रंग की चूनड़ी पीछे
गरक गई थी । गहली रचे पावों में पायल छनक छनक
करनी एक नय में बज रही थी ।

राजकुमारी कोडमदे अपने निजी कक्ष के गवाश से
पावम ऋतु में धुन रजन ज्योत्सामय आवाश को देख
रही थी । उमकी गभीर दृष्टि में उदास परछाइयाँ तैर रही
थीं । दूर दूर तक मौन मोया हुआ था ।

अपनी स्वाम बाँगी भागी को भागते हुए आते देखकर
उमका एकाग्रता भंग हुई । पलकों पर जो व्यथा पराग
एकत्रित हुआ गया था उम उमने अपनी मधुल हृदयियों से
दाघ निश्चाम के साथ धोछा । फिर भारतीय की ओर उमुख
हुई और दृढ़ स्वर में बोली, क्या है ?”

"बाई सा, अभी कुवर बजेन्द्र जी कह रहे थे कि पूगल के भाटा जकुमार सादुल ने एक साथ दो दोरा का मार डाला। मचमुच ऐसा होता इस समय भूमि पर नहीं है।"

और यह प्रगति उमक आरम तक म कड जिना से अचरित प्राय शीघ्र पर जल मिचन कर गई।

वह पीतल के मयूरी दीवट पर रहे शीघ्र के सनिकट घायी और उसकी बाती को ठीक करते हुए बोली "माधुन जी नर-नाहर हैं। पर मर भाग्य में ऐस गुरवीर पति कौन? गव मा न मर भाग्य का बचपन में ही मारवाह के खुडोत्री रागी के पुत्र 'अरुड कमल' के सग बाप दिया है। कामदे इतना कहकर मगमयी गय्या पर आकर अथ शायित हो गयी। उमका मन अवन अन्तर की सुनिवार पीटा म दृक मा उठा उस उस अरुड कमल के साथ निश्चय विना दुआ दिवत मय्यत्र कर्म पसत नहीं है। उमने अरुड नयन गल भर का दन्त दिवत मय्यत्र दिवत उठकर समीप रहे एक नसदी के अग्रत अक . व म दृक के म म अर्ध। जे मोता और उममें म एक विप्र निदाया। विप्र जिना न मय्यत्र का पा। विनाल नत्र और आजातु प्रति। मय पर उठकृत मीन ईश्वर मोनिया के हार। वह उठ विप्र का अग्रत अक अग्रत म मय्यत्र मय्यत्र। यह विप्र सादुल का था।

चाहिए। आपसी यह बटी एक भयकर भूल कर बठी है। वह महीना से भाटी सरदार सादुल को अपने मन मदिर का दवता मान रही है। मैं चाहती हूँ कि मरा हाथ आप उही के हाथ म दे दें। यह मेरी हादिक इच्छा है।

माणकराव पर वज्र टूट गया। हुक्म की नली हाथ की हाथ म रह गई। कुछ क्षण उनसे बोला नहीं गया। प्रन्नवाचक दष्टि स वे कोडमदे को देखते रह।

आप मरे जन्मदाता और भाग्य विधाता हैं। आप यदि मेरी इच्छा के विरुद्ध भी धरडकमल को सौंपगे तो भी मुझ जाना ही पडेगा, लेकिन मैं उस तन स्पग नहा करन दूगी। व मरे गव को ही स्पग कर पायेंगे। कोडमद के नयन अश्रुपूरित हो गय। राव को कुछ नहीं सूझ रहा था। केवल स्तब्ध से बठे थ।

कोडमदे उठकर जान लगी तो उ हनि भारी स्वर म कहा, ठहरो!

यह अनहोना विचार तुम्हारे मन म कसे आया? चौहाण बग के राव म तरह अपनी बहू बटिया का सम्बन्ध तोडेंग तो ससार उनकी धान-दान पर खूफगा नहीं? बचनो के पालन के लिए जिन चौहाणो न अपना सवनाग कर लिया क्या व चौहाण राठीरो क समक्ष क्या-दान की बात क लिए अपना मिर भुकायेंग? कोडमदे! यह बचन भग इस घरा का रक्त रजिन कर दगा। रणनेवी का खप्पर नर मुण्डा स भर जायगा। साच लो।

'मैं जन् परिणामा स नहा डरनी। जिस दिन राजपूतानिया इतनी दूरगी बन गयीं उम जिन राव सा, उनका पति निगव होकर मुद्धभूमि म नहा जयेंग। व प्रचष्ट मानण्ड का तरह तेजस्वी होकर गन्धुमो को भग्नाभूत नहीं करेंग क्योंकि तब व पति की मृत्यु क पन्चात घाने वाले उन क्या क बार म साच पैगा जा उह निबल बना देंग। कोडमदे का स्वर जाग म भग था।

नजिन बग।

मैंने अपने हृदय की बात आपके समक्ष रख ली। अब आप स्वयं अपना निर्णय लें। मैं इतना जानती हूँ कि महाबली सादुल वं जीते जी चौहाणा का कोई भी बाल बाका नहीं कर सकता।'

माणकराव ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह सुन सँ बैठ रहे। कोडमदे बहा से उठकर अपने कमरे में आ गयी। भारली ने व्यग्रता से पूछा, 'क्या बहा रावजी न।'

'उन्होंने अभी कोई उत्तर नहीं दिया। मुझे विश्वास है कि शीघ्र ही इस पर कोई नया निर्णय ले लिया जायगा।'

उसके चौथे दिन की बात है।

कोडमदे अभी भी अलस निद्रा में निमग्न थी। प्रभात के दबता सूर्य की रश्मियाँ ससक्ति की आलोकित करने लगीं। शीतल समीर के स्पर्श से कोडमदे की मुख थी पर एक अलक उड़ कर इस तरह बिखर गयी थी मानो श्वेत सगरमर पर काली रेख खींच दी हो।

भारली ने कोडमदे को जगाया। कोडमदे कदाचित्त मधुर स्वप्न देख रही थी इसलिए आँखें खोलन हुए वह तनिक रोप से बोली, 'त्रिगोडी, जब जगानी है तब मुझे स्वप्न के सुख से जगाती है।'

'लेकिन बाई सा मैं आपकी सपने का स्वप्न नहीं सत्य का स्वप्न देने आयी हूँ। इस पृथ्वी का जीता-जागता स्वप्न।'

त्वर से वह तबो यौवना बैठ गयी। व्यग्रता से पूछने लगी 'कौन सा स्वप्न? जल्दी से बता।'

'पहले मुह मीठा कराइए।'

तू मेरे मन की बात पूरा कर दे तो मैं तेरा मुँह ही मीठा नहीं, तेरी झोली झोलियों से भर दूंगी।'

'फिर सुनिए। छाती पर हाथ रखकर सुनिए, आज आपके विवाह का नारियल पूगल के राजकुमार सादुलजी को जा रहा है। हालाँकि सारे चौहाण हमारे कुपरिणाम से परिचित हो गए हैं। — — — कीयता से बोली।

“जो व्यक्ति अत के बारे में सोचता है, वह कभी धारम्भ ही नहीं करता।” कोडमदे ने सहज स्वर में कहा “पहले तेरी भोली मोतियों से भर दू।” कोडमदे ने सचमुच अपने गल के मोतियों के हार को भारती के लाल मना करने के वावजूद भी उसको दे दिया और गीध्रता से बपड़े बल कर वह रावजी के पास गयी। उनके चरण स्पर्श करके बोली, ‘ऐसा बाप किसी बेटी को नहीं मिलने का। भगवान से प्रार्थना है कि मेरी आयु भी आपको लग जाय। आपके गीय का डका सबत्र बजे।’ और खुशी के मारे कोडमदे की आँखा में अश्रु छलछला आए।

कोडमदे को अपने सीने से लगाकर माणकराव बोले, मेरा तुम्हें आशीर्वाद है कि तुम्हारा विवाह बिना विध्न बाधा के हो जाय।

×

×

×

गहनार्द्र का मधुर-पीर भरा स्वर गूँज पड़ा।

पूगत का राजकुमार सादुल, जो अनाम सा रूपवान था और अजुन सा महाबली, दूल्हा बनकर आ गया। बड़े धूमधाम से विवाह हुआ। विवाह में कोई विध्न नहीं पड़ी। लेकिन हर क्षण माणकराव को आगता बना रहा कि किसी भी समय अनिष्ट हो सकता है। किसी समय राठोड का अरुणमन अमान की प्राण में जताकर विध्वंस कर सकता है। अतएव विध्न के समय उमने सादुल का एकान्त में ल जाकर कहा ‘बवर मा। आपका भगवद चुने हुए सनिक हा हैं। आप मरी सना ल जाइये। मुझे विश्वास मूत्र में पना बना है कि अरुणमल को इस विवाह के समाधार मित चुक हैं। वर अना मगतर का इस सहजता से नहीं ल जान पाए। वह अकल्प ही आप पर आक्रमण करेगा।

राव का एक बान ग सादुल का आश्रमी मुन्य रक्तिम हा उगा। वर दइना म वाता गीय का परीणा इस तरह की लडाई में ही होगी

है। मुझे अपनी कुलदेवी का विश्वास है और भरोसा है इन भुजाओं का। आप आकुल-व्याकुल मत होइये। यदि अरुडकमल रणभूमि में उतर आया तो उसे दिन के तारे दिम्बा दूंगा।”

“लेकिन कुवर सा! दो मिट्टी के ही बुरे होते हैं। राजनीति और युद्ध केवल बल से ही नहीं, कौशल से भी लड़ा जाता है। वह कौशल अभी यही कहता है कि आप अपने साथ सेना लेकर जायें।”

“मुझे आपका यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं है। मेरी माँ सा ने जब पहली बार मेरे हाथ में तलवार दी थी तब कहा था कि मुझे तुम्हें जन्म देकर कोई प्रसन्नता नहीं हुई है, मुझे सच्ची प्रसन्नता उस दिन होगी जब तू विजयी होकर आयेगा।”

माणकराव ने किंचित हिचकते हुए शका प्रकट की, “वही अरुडकमल अपनी विशाल बांहों के सग आक्रमण करके कोडमदे को।”

सादुल के नेत्रों से अगारे बरसने लगे। वह कड़क कर बोला, “जब आकाश फटने लगेगा, जब इस धरा पर धम नहीं रहेगा, जब रणांगण नर-मुण्डों से भर जाएगा और जब सूरज अपना तेज छोड़ देगा तब सादुल की पत्नी को कोई उससे छीन सकता है। आप निश्चिन्त होकर हम बिना कीजिए। आशकाभा व दुराशाओं से भयभीत मत होइये।”

अन्त में माणकराव ने अपनी कन्या कोडमदे को सादुल के साथ विदा कर दिया। भारती उसके साथ थी।

बारात बीकानेर से लगभग १६ मील के पास थी। उसी समय अरुडकमल ने अपनी विशाल राठीदी सेना के साथ सादुल पर आक्रमण कर लिया।

सादुल ने उस आक्रमण का सामना किया। कोडमदे अपने रथ में बठी हुई सादुल का भीषण पराक्रम देख रही थी। किस तरह सादुल दानुओं का गाजर-मूली की भाँति सहार कर रहा है। किस तरह पृथ्वी माता नर-मुण्डों व रक्त धाराओं से अपना शृंगार कर रही है। रणभेरियों के तुमुल नाद से दिग्दिगन्त गुँज उठे हैं। अरुडों व कुँठों की आवाजें

रण क्षेत्र भर सा गया है ।

साम्ब आकाश से उतरी तो युद्ध बंद हुआ । साहूत सादुल अपने खेम म आया । कोडमदे ने उसकी आरती उतारी । चरण धूलि लेकर बोली मैं प्रभु से प्रार्थना करती रही हूँ कि मुझे आप जैसे वीर पति की पत्नी बार बार बनाना । मैं कहती हूँ कि ऐसा सुहाग शक्ति भी हो तो भी अमर सुहाग है ।”

कोडमदे और भारती ने कसूम्बे का प्रबंध किया । सादुल के धावा की मरहम पट्टी की । श्रांत सादुल के नेत्रों में नींद घुलने लगी । भारती खेम के आगे पहरा लगा रही थी कि उसने सहसा कोडमदे को पुकारा । कोडमदे बाहर आयी । चारा और प्रार्थना गति छापी हुई थी । शत्रु का खेमो में भी मगलें जल रही थी । कभी-कभी कोई सियार बोल जाता था जिससे मौन टूटना हो जाता था । कोडमदे ने पूछा ‘क्या बात है भारती ?’

बाई सा अरटकमलजी कुंवर सा से मिलना चाहते हैं । वे हमारी विराम रेखा के उस पार खड़े हैं ?

कोडमदे रण भर के लिए भीतर गई । वापस आकर उसने कहा उह सम्मान यहाँ लाया जाय ।

थोड़ी देर में अरटकमल सादुल के खेम में था । उसका स्वागत मत्कार बटुन हा सम्मान में किया गया ।

अरटकमल ने कहा मैं आपसे गति और धर्म की बात करने आया हूँ । यत् आप स्वयं जानते हैं कि राजकुमारी पर मरा पहना अधिकार है । किमा प्रतिष्ठित व्यक्ति की मगतर को व्याह लाना उमका पौर सम्मान करना है । मैं चाहता हूँ कि आप अब भी कोडमदे को हम साथ दें और व्यय में मवनाग में बचिए ।

आपका बेवतन यही करना था ता फिर आपन व्यय ही बच सिया । कोडमदे अब मरा विवादिता है पत्नी है गाम्ब-ममाज के अनुसार बटु अब मर मिथा किया की कहा हो सकती । जो मेरी है वह मैं

जीने जी किसी का भी नहीं दे सकता । राठीड़-कुल हूँ ! मैं आपका अपमान नहीं चाहता हूँ पर आप रण भूमि में मेरे समान मन धाड़ेंगा । मेरे समक्ष आकर आप जीवन नहीं सौटेंगे ।'

' यह तो युद्ध भूमि में देखने । अच्छा ! ज माता जी की ।'

अरडकमल लोट गया । शान्ति वाता भग हो गई । होनी भी थी क्योंकि कोई किसान से अवधानिक रूप से किसी की वस्तु को छीनना चाह तो कौन छीनने देगा ।'

आज मूय रणवाद्या का घोष बरता हुआ ही उगा । शखनाद और तूयनाद से नर केसरी सादुल का वर हिल्लाहित हो रहा था । धमनिमा का रक्त उष्ण होकर मुद्ध मुद्ध चिल्ला रहा था ।

कीडमदे सोलह शृंगार करक अपने पति को विन्ता दे रही थी । आरती उतार कर उमने कहा, मैं रथ पर बैठी हुई आपका रण कौशल देखूंगी ।'

सादुल ने गज कर कहा आज मर आश्रमण से स्वयं रण-देवता मयभीत हो जाएंगे ।

रणभेरी बजी ।

अरव पर आरुड सादुल विषराल दानव की भाति शत्रुमा पर टूट पडा । शत्रु सेना श्राहि श्राहि करने लगी । उह अम होन लगा कि सादुल एक है या अनेक । अरडकमल के पाँउ उखडने लगे । उसी समय अरड कमल की सहायता के लिए एक और सेना आ गई । दग्धते देखते सादुल का अपिवांग सैनिक खेत रह गए । उसकी आगा टूटन लगी । वह रणक्षेत्र छोडकर मोडमदे के पास आया । तलाक पर वहन हुए रक्त की पोछकर बोला, कुँवराणी सा ! अब मैं आपसे अन्तिम विन्ता लेने आया हूँ । भगवान न चाहा तो यहाँ फिर मिलेंगे नहीं तो अगले जन्म में ।'

कीडमदे ने उत्साह से कहा आप विन्ता मत्र कीजिए । वीर की पत्नी जन्मजमान्तर अपने पति का साथ नहीं छोडती है । हम यहाँ नहीं तो स्वर्ग में अवश्य मिलेंगे । आप अपने वतथ्य पर डटे रह ।'

